mÙkj izns'k jktf"kZ V.Mu eqDr fo'ofo|ky;]
iz;kxjkt

MASW-101

lekt dk;Z&fl)kUr ,oa vH;kl

[k.M & 5

Hkkjrh; lafo/kku ,oa lkekftd lqj{kk

bdkbZ & 23 — 5&18
भारतीय संविधान का कल्याणकारी प्रारूप

bdkbZ & 24 — 19&34
स्वयंसेवी संगठन की भूमिका

bdkbZ & 25 — 35&54
ट्रस्ट एवं सामुदायिक संगठनों की रचना एवं भूमिका

bdkbZ & 26 — 55&68
मानव अधिकार एवं सामाजिक न्याय

mÙkj insz'k jktf"kZ V.Mu eqDr fo'ofo|ky;
mÙkj insz'k iz;kxjkt

MASW-101

laj{k.k ,oa ekxZn'kZd

dqyifr & izksŒ dsŒ ,uŒ flag
उ०प्र० राजर्षि टंण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

fo'ks"kK lfefr

1- izksŒ ,lŒ f=ikBh] भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु वि.वि. वाराणसी एवं भूतपूर्व निदेशक, सुलभ इण्टरनेशनल, नई दिल्ली।
2- izksŒ vejukFk flag] विभागाध्यक्ष, समाजकार्य महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।
3- izksŒ vjfoUn tks'kh] प्रोफेसर समाजशास्त्र विभाग काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी।
4- MkŒ ,eŒ ,uŒ flag] पूर्व निदेशक समाजवि वि० उ०प्र० राजर्षि टंण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।
5- MkŒ vYdk oekZ] शैक्षणिक परामर्शदाता, सामाजकार्य विभाग वि. उ०प्र० राजर्षि टंण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

ifjekid@laiknd

izksŒ ,Œ ,uŒ flag] विभागाध्यक्ष समाजकार्य विभाग महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

leUo;d

MkŒ vYdk oekZ] 'kS'kf.kd ijke'kZnkrk] उ०प्र० राजर्षि टंण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

ys[kd

1- MkŒ Hkxoku oekZ] समाज कार्य विभाग, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ वारणसी।
2- MkŒ vYdk oekZ] समाज कार्य विभाग, उ०प्र० राजर्षि टंण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

2020 ¼eqfnzr½
© m0iz0 jktf"kZ V.Mu eqDr fo'ofo|ky;] iz;kxjkt 2020
ISBN-

lokZf/kdkj lqjf{krA bl lkexzh dk fdlh Hkh va'k dks jktf'kZ V.Mu eqDr fo'ofo|ky;] iz;kxjkt dh fyf[kr vuqefr ds fcuk fdlh Hkh :Ik esa] fefe;ksxzkQh ¼pØeqnz.k½ }kjk ;k vU;Fkk iqu% izLrqr djus dh vuqefr ugha gSA

ukV % ikB; lkexzh esa eqfnzr lkexzh ds fopkjksa ,oa vkadMksa vkfn ds izfr fo'ofo|ky;] mÙkjnk;h ugha gSA

izdk'ku&mÙkj insz'k jktf"kZ V.Mu eqDr fo'ofo|ky;] iz;kxjkt& 211021

izdk'kd&dqylfpo] Mk0 v:.k dqekj xqIrk m0iz0 jktf"kZ V.Mu eqDr fo'ofo|ky;] iz;kxjkt &2020

eqnzd & pUnzdyk ;qfuoZly izkbZosV fyfeVsM] 42@7 tokgjyky usg: jksM] iz;kxjkt ¼bykgkckn½

[k.M&5 dk ifjp;

Hkkjrh; lafo/kku ,oa lkekftd lqj{kk

➢ इस पाठ्यक्रम का पाँचवा खण्ड भारतीय संविधान एवं सामाजिक सुरक्षा पर आधारित है। इस खण्ड में चार इकाइयॉ रखी गयी है पहली इकाई का शीर्षक भारतीय संविधान का कल्याणकारी प्रारूप है। इसके अर्न्तगत भारतीय संविधान का कल्याणकारी प्रारूप, भारतीय संविधान में समाज कल्याण के प्रावधान, समाजवादी राज्य, राज्य की नीति निर्देषक तत्व, सामाजिक और आर्थिक न्याय, समाज कल्याण के लिए वर्तमान आर्थिक नीतियॉ और उपेक्षा, कल्याणकारी प्रारूप को प्राप्त करने के लिये सूझावों पर प्रकाश डाला गया है। द्वितीय इकाई का शीर्षक है स्वयं सेवी संगठन की भूमिका इसके अर्न्तगत स्वयं सेवी संगठन का अर्थ स्वयं सेवी संगठनों की प्रमुख विशेषताएं स्वौच्छिक कार्य के प्रेरक तत्व, स्वयं सेवी संगठनों के कार्य स्वयं सेवी संगठनों को राज्य सरकारों द्वारा सहायता स्वयं सेवी संगठनों को विदेशी सहायता पर प्रकाश डाला गया है। इस खण्ड की तीसरी इकाई का शीर्षक है इस्ट एवं सामुदायिक संगठनों की रचना एवं भूमिका इसके अर्न्तगत इस्ट या न्यासों का संगठन, पंजीकरण के लाभ, न्यासों का पंजीकरण सामान्य सभा, प्रबन्ध समिति का संगठन एवं कार्य, संस्था के पदाधिकारियों की स्थिति एवं कार्य सामुदायिक संगठन, संगठन की भूमिका कार्य सामुदायिक कल्याण कार्यक्रम, परिवार कल्याण नेतृत्व का विकास पर प्रकाश डाला गया है। इस खण्ड की अन्तिम इकाई का शीर्षक है मानव अधिकार एवं सामाजिक न्याय इसके अर्न्तगत मानवाधिकार, अर्थ संकल्पना एवं प्रकृति, सैद्वान्तिक या दार्शनिक सिद्वान्त से सम्बन्धित दृष्टिकोण, प्राकृतिक अधिकार सिद्वान्त विधिजन्य अधिकार सिद्वान्त, अधिकार का सामाजिक कल्याण सिद्वान्त अधिकार का आदर्शवादी सिद्वान्त अधिकार का ऐतिहासिक सिद्वान्त मानवधिकार का वर्गीकरण, मानवाधिकार की सकंल्पना, सामाजिक न्याय पर प्रकाश डाला गया है।

bdkbl&23

Hkkjrh; lfo/kku dk dY;k.kdkjh ik:i

bdkbl dh :ij[kk

23-0 mnn';

23-1 iLrkouk

23-2 Hkkjrh; lfo/kku dk dY;k.kdkjh ik:i

23-3 Hkkjrh; lfo/kku e lekt dY;k.k d iko/kku

  23-3-1 समाजवादी राज्य

23-4 jkT; d uhfr funl'kd rRo

  23-4-1 सामाजिक और आर्थिक न्याय

23-5 lekt dY;k.k d fy, orleku vkfFkd uhfr;k vkj mi{kk

23-6 dY;k.kdkjh ik:i dk ikIr dju d fy, l>ko

  ck/k i'u

23-7 lkjk'k

23-8 'kCnkoyh

23-9 dN mi;kxh iLrd

23-10 ck/k i'uk d mRrj

23-0 mnn';

इस इकाई में भारतीय संविधान के कल्याकारी प्रारूप की चर्चा की गयी है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

¼1½ भारतीय संविधान के कल्याणकारी रूप को समझेंगे।

¼2½ भारतीय संविधान में सामाजिक एवं आर्थिक न्याय पक्ष को जानेंगे।

¼3½ संविधान के कल्याण प्रारूप की कमियों एवं सुझावो को जानेंगे।

23-1 iLrkouk

भारत एक कल्याणकारी राज्य है और इसके अलावा दुनिया में सबसे बड़ा लोकतंत्र माना जाता है, भारत में लोग इसे भारतीय संविधान की प्रस्तावना द्वारा घोषित किया जाता है, के रूप में हमारे देश में सर्वोच्च प्राधिकारी के रूप माना गया है कि संप्रभुता निहित संसद में लेकिन भारत संघ के लोगों में ‘‘समाज

कल्याण'' स्वतंत्रता के ही समय से चल रही है हमारी नीति के केन्द्र में (सैद्धांतिक रूप से कम से कम) कर दिया गया है ही कार्यक्रमों और योजनाओं के कृषि और ग्रामीण तरह के रूप में समाज कल्याण के मुद्दों से संबंधित शुरू किया गया है ''पहली पंचवर्षीय योजना'' से विकास, रोजगार और श्रम कल्याण, स्वास्थ्य, शिक्षा, आदि दरअसल आर्थिक की कमी से बावजूद प्रांरभिक 20–25 साल में सरकार कल्याण नीतियों और समावेशी विकास पर ध्यान केंद्रित किया गया था मतलब है। आज के समय में यह होगा के रूप में समाज कल्याण की अवधारणा, ईमानदारी के रूप में सरकार द्वारा नहीं लिया गया है। सरकार का का रवैया बहुत ही अनुकूल और लागों के प्रति सहयोगात्मक नहीं है, और यह लोकपाल विधेयक और गरीब लोगों के लिए गरीबी रेखा के निर्धारण से संबधित विवाद पर हाल ही में बहस से दिख रहा है। मैं सरकार ईमानदार होना प्रतीत नही होता कई घोटालों और अनियमिताओं की केंद्रीय और राज्य सरकारों में आए हैं के रूप में लोगों की सेवा के प्रति अपनी जिम्मेदारी के बारे में पूंजीवाद का विस्तार, गरीब किसानों से भूमि का सशक्त अधिग्रहण, और कृषि और ग्रामीण विकास के विकास के लिए उपेक्षा से संबंधित विषम नीतियों स्थिति बदतर बना रहे है।

23-2- Hkkjrh; lafo/kku dk dY;k.kdkjh ik: i

भारत एक व्यापक और विस्तृत लिखित संविधान द्वारा नियंत्रित किया जाता है, जो दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र माना जाता है। लोक कल्याणकारी राज्य का आदर्श राज्य नीति निदेशक सिद्धान्तों में समाहित है। हमारे स्वतंत्रता संग्राम ने सामाजिक पुनर्निर्माण तथा आर्थिक विकास से संबंधित कुछ आदर्श, विचार और धारणाएँ हमें प्रदान की थीं। छुआछूत तथा सामाजिक, आर्थिक विषमताएँ मिटाने का गांधीवादी विचार, ग्रामीण विकास और बुनियादी शिक्षा के कार्यक्रम, छोटे कुटीर उद्योग तथा स्वदेशी आंदोलन कुछ ऐसे विचार और प्रक्रियाएँ थीं जिन्हें गरीबी, बीमारी और निरक्षरता दूर करने के लिए जरूरी समझा गया था। हमारे संविधान निर्माताओं ने इन विचारों को संविधान के निदेशक सिद्धान्तों में मूर्त रूप दिया। उनकी यह इच्छा थी कि भारतीय राज्य राष्ट्रीय जीवन की समस्त संस्थाओं और प्रक्रियाओं में सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय का सामंजस्य करते हुए सभी का कल्याण करें।

इस उद्देश्य की प्राप्ति आंशिक रूप से तो सभी को समान मूल अधिकार देकर और आंशिक रूप से उन नीति निदेशक सिद्धान्तों को निर्धारित करके की गयी है जो राज्य का उसकी योजनाओं और कार्यक्रमों को निर्मित करने में मार्ग दर्शन करते है। संसाधनों की कमी के कारण कुछ अधिकारों को जैसे, काम का अधिकार, सुनिश्चित करना कठिन था इसलिए ऐसे अधिकारों को नीति निदेशक सिद्धान्तों में ससिम्मलित किया गया।

इसके अलावा राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत एक अलग अध्याय के लोगों के कल्याण के लिए आदर्श शासन के नियमों को देती है जो सरकार के कल्याण जिम्मेदारियों के प्रति समर्पित किया गया है। यह काफी हद तक भूमंडलीकरण और पूजीवाद से प्रभावित रहे हैं जो सरकार की मौजुदा आर्थिक नीतियों, उसके कलयाण के दायित्वों के अनुरूप नहीं है। एक ओर अर्थव्यवस्था पर वृद्धि बहुत तेज है, लेकिन इसके लाभ 10–15ः आबादी तक ही सीमित है, अमीर गरीब की विभाजन लगातार बढ़ती जा रही है, कृषि क्षेत्र के आर्थिक विकास का केंद्रित रूप से उपेक्षित है, लघु उद्योग तबाह हो गया है नव उदारवादी नीतियों के प्रभाव,

क्षेत्रीय असमानतायें काफी हद तक बढ़ गई है। व्यय और कार्यान्वयन के मामले में दोनों की योजना ध्यान केंद्रित लोगों के साथ आर्थिक नीतियों में परिवर्तन करने की तत्काल आवश्यकता पर जोर दिया है और कृषि के विकास पर विशेष ध्यान देने के साथ कुछ सुझाव, गरीबी और असमानता के उन्मूलन, लघु उद्योगों, कॉर्पोरेट जिम्मेदारी, पर्यावरण के प्रवर्तन आदि प्रदान की गई है।

23-3- Hkkjrh; lfo/kku e lekt dY;k.k d iko/kku

भारतीय संविधान के तहत समाज कल्याण के लिए योजना संविधान के विभिन्न प्रावधानों में परिलक्षित होता है। विभिन्न प्रावधानों में राज्य के सामाजिक कल्याण दायित्वों के अंतर्निहित और स्पष्ट जिक्र कर रहे हैं, हम एक–एक करके इन प्रावधानों के एक अध्ययन कर सकते हैं:

23-3-1 lektoknh jkT;

भारत के संविधान की प्रस्तावना एक ''समाजवादी'' देश के रूप में भारत की वाणी है, और इस अवधि में ही सरकार के समाज कल्याण जिम्मेदारियों के अस्तित्व का एक पर्याप्त सबूत देता है। भारत की डी एस छांतं बनाम यूनियम के मामले में भारत के सुप्रीय कोर्ट ने समाजवाद को सम्मान के साथ निम्न अवलोकन किया ''एक समाजवादी राज्य का मुख्य उद्देश्य आय और स्थिति में असमानता, और जीवन के मानक को खत्म करने की है। समाजवाद के बुनियादी ढांचे के काम कर रहे लोगों के लिए जीवन का एक सभ्य मानक प्रदान करते हैं और विशेष रूप से पालने से कब्र के लिए सुरक्षा प्रदान करना हैं।''

एक समाजवादी राज्य सरकार जीवन की न्यूनतम सुविधाओं को हर व्यक्ति के लिए प्रदान की जाती हैं। कि यह सुनिश्चत करने के लिए कदम उठाने की आवश्यकता है और जहाँ तक लोकतांत्रिक तरीके से संभव आय और भौतिक संसाधनों की समानता है एक समाजवादी राज्य के कई आदर्शो को प्राप्त करने का प्रयास है, उनमें से कुछ हैं :

- आर्थिक संसाधनों के वितरण में असमानता को हटाया जाएं
- रोजगार के लिए अवसर की समानता
- समान कार्य के लिए समान वेतन
- मजदूरों के शोषण के उन्मूलन
- समतावाद के न्यूनतम स्तर का रखरखाव
- एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना

23-4 jkT; d uhfr&funs'kd rRo

भारतीय संविधान के भाग 4 में कुछ ऐसे निर्देशों का उल्लेख हैं जिन्हें पूरा करना राज्य का पवित्रतम कर्त्तव्य माना गया है। उन्हें राज्य के नीति–निर्देशक तत्व कहा जाता है। इन नीति–निर्देशक तत्वों को भारतीय संविधान में उपबन्धित करने की प्रेरणा मुख्यतः आयरलैण्ड के संविधान से मिली है। ये सिद्धान्त निदेशकों के रूप में हैं जो विधान–मंडल तथा कार्यकारिणी के पथ–प्रदर्शन के लिए संविधान

में उपबन्धित किये गये है। लोककल्याण की उन्नति के हेतु राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था करेगा जिसमें सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक न्याय की स्थापना पर बल दिया जायेगा। इसके अन्तर्गत मुख्य रूप से धन तथा उत्पादन के साधनों का न्यायोचित वितरण, बालकों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, देश के लोगों के जीवन–स्तर को ऊंचा उठाना, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका का पृथक्करण, अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा का प्रयास करना तथा ग्राम पंचायतों का संगठन आदि शामिल हैं।

राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्त उपर्युक्त लक्ष्यों के पूरक है। राज्य इन्हीं नीति– निर्देशक तत्वों का पालन करके भारतीय संविधान की प्रस्तावना में कल्पित एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना कर सकता है। ऐसी सामाजिक व्यवस्था में ही व्यक्ति को अपना बहुंमुखी विकास करने का सुअवसर प्राप्त होता है, और साथ ही साथ राष्ट्र की भी बहुमुखी उन्नति हो सकती है। ग्लेनविन ऑस्टिन ने इन सिद्धान्तों को 'राज्य की आत्मा' कहा है।

स्मरणीय है कि इन सिद्धान्तों के द्वारा नागरिकों को कोई विधिक अधिकार नहीं दिया गया है, जब कि मूल अधिकारों को यह श्रेय प्राप्त है। दूसरे शब्दों में यदि राज्य इन लक्ष्यों को पूरा करने में असफल होता है या उसे पूरा करने का प्रयास नहीं करता है तो किसी भी नागरिक को यह अधिकार नहीं है कि राज्यों द्वारा उनके कार्यान्वयन के लिए न्यायलयों से आदेश प्राप्त कर सके। ये उपबन्ध वास्तव में नैतिक आदर्शो के रूप में हैं और यह आशा की जाती है कि राज्य इन निदेशों का पालन करना अपना परम कर्त्तव्य समझेगा। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि इन निदेशों का पालन करना अपना राज्यों की इच्छा पर निर्भर करता है और इसी आधार पर इनकी आलोचना भी की गई है कि इनके पीछे कोई ऐसी शक्ति निहित नहीं है जिसके भय से राज्य इनका पालन करेंगे। लोकतान्त्रिक व्यवस्था में जनता का न्यायालय उच्चतम न्यायालय होता है जिसके प्रति जनता के प्रतिनिधि उत्तरदायी होते हैं। यदि राज्य इन निदेशों की अवज्ञा करता है तो जनता अपने मताधिकार का समसुचित प्रयोग करके उस सरकार को बदल सकती है।

संविधान के 26वें और 42वें सांविधानिक संशोधनों द्वारा राज्य के निदेशक तत्वों के महत्व को और अधिक बढ़ा दिया गया है और उन्हें मूल अधिकारों पर सर्वोच्चता प्रदान कर दी गई है। अब नीति निदेशक तत्वों को कार्यान्वित करने वाली विधियों को इस आधार पर न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती कि वे अनु0 14 और 19 में प्रदत्त मूल अधिकारों का अतिक्रमण करती हैं।

23-4-1 lkekftd vkj vkfFkd U;k;

हमारे संविधान की प्रस्तावना अर्थात् ''सामाजिक'' और ''आर्थिक न्याय'' सामाजिक कल्याण में सक्रिय रूप से शामिल करने के लिए राज्य पर जिम्मेदारियों बना जो दो अन्य अवधारणाओं का उपयोग करता है। सामाजिक न्याय की अवधारणा के तहत राज्य सामाजिक रूप से बहिष्कृत समूहों की गरिमा शक्तिशाली का उल्लंघन नहीं है और वे दूसरों के साथ बराबरी पर माना जाता है कि यह सुनिश्चत करने के लिए आवश्यक है। उपभोक्ता शिक्षा और भारत के रिसर्च सेंटर बनाम युनियन के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने यह कहा गया था।

''सामाजिक न्याय, समानता और व्यक्ति की गरिमा सामाजिक लोकतंत्र के लिए हैं। भारत के संविधान में सुव्यवस्थित विकास और प्रत्येक नागरिक के

व्यक्तित्व के विकास के लिए आवश्यक विभिन्न सिद्धांत हैं जिसकी अवधारणा सामाजिक न्याय को लागू करना है।''

Hkkjrh; lfo/kku dk dY;k.kdkjh ik:i

lkekftd U;k; %& सामाजिक न्याय वह गुण है जिसे सामाजिक गतिविधियों में या समाज द्वारा व्यक्तियों और समूह के प्रति व्यवहार में सन्निहित होना चाहिए। रॉल्स के अनुसार यह मानना चाहिए कि प्रथम दृष्ट्या सामाजिक न्याय की अवधारणा एक मानक है जिसके द्वारा समाज की मूल संरचना के वितरणात्मक पहलू का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। यह वह तरीका है जिसके माध्यम से प्रमुख सामाजिक संस्थाएं–राजनीतिक संविधान एवं मुख्य आर्थिक और सामाजिक व्यवस्थाएं मूल अधिकारों और कर्त्तव्यों का वितरण करती हैं और सामाजिक सहकारिता से लाभों के विभाजन को निर्धारित करती है। समाज में परिव्याप्त विषमताओं के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक न्याय के सिद्धान्त राजनीतिक संविधान के विकल्प और आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्था के मुख्य तत्वों को विनियमित करने का कार्य करते हैं। होनोर के अनुसार सामाजिक न्याय का सिद्धान्त इस विचार में निहित है कि सभी लोगों का सामान्यतः इच्छित और तथ्यतः मानवीय पूर्णता और मानवीय प्रसन्नता में सहायक सभी लाभों में समान दावा है। इसके दो मुख्य पहलू है। प्रथम, अच्छे जीवन के लिए अत्यावश्यक मानवीय और अचेतन सम्पदा की दृष्टि से मानवीय दशाओं का समताकरण। इसमें जीवन की आवश्यकताओं, स्वयं जीवन, स्वास्थ्य, भोजन, मकान इत्यादि और इसी तरह काम और मनोरंजन दोनों के लिए समान अवसर के समान दावें निहित हैं। सामाजिक न्याय के सिद्धान्त का दूसरा पहलू विभेदहीनता और नियम–संगति के सिद्धान्त में निहित है। ये निश्चित करते हैं कि जो पहले पहलू के अन्तर्गत दिये गये हैं वे बाद में छीने नहीं जायेंगे। सामाजिक न्याय के सिद्धान्त और विशेष कर विभेदहीनता के सिद्धान्त के कुछ अपवाद हैं। ये अपवाद न्याय के अधीनस्थ सिद्धान्त जैसे संव्यवहारों में न्याय, गुणवत्ता के अनुसार न्याय, विकल्प के अनुसार न्याय और आवश्यकता के अनुसार न्याय के अन्तर्गत आते हैं। सामाजिक न्याय के सिद्धान्त का औचित्य इस बात पर आधारित है कि समान दावे का सिद्धान्त सहज एवं प्राकृतिक है।

होनोर ने सामाजिक न्याय के सिद्धान्तों के बारे में निम्नलिखित संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया है :–

1- सामाजिक न्याय की अपेक्षा है कि सामान्यतः इच्छित और मानवीय सुखद जीवन के लिए सहायक अनेक लाभों में सभी व्यक्तियों का समान हिस्से का दावा होना चाहिए।

2- यह सिद्धान्त सभी लोगों के साथ समान व्यवहार के लिए मांग के समरूप नहीं है बल्कि यह दूसरों के पास पाये जाने वाले लाभों से हीन अलाभकारी स्थिति वाले लोगों के लिए वरीयता के अनुसार व्यवहार की अपेक्षा करता हैं।

3- आवश्यकता के अनुसार वितरण का सिद्धान्त सामाजिक न्याय का अधीनस्थ पहलू है।

4- नियम–संगति का सिद्धान्त भी सामाजिक न्याय का अधीनस्थ पहलू है यह सिद्धान्त सभी लोगों के लिए दो लाभों को प्रदान करना चाहता है कि उनकी युक्तियुंक्त प्रत्याशाएं पूरी होंगी और उनकी प्रतिष्ठा का सम्मान होगा।

5- विभेदीकरण केवल निम्न के लिए ही उचित है :

¼d½ 2 में दिए गये सिद्धान्त को प्रभावी बनाने के लिए।

¼[k½ व्यक्ति को विभेदीकरण के अधीन केवल वास्तविक या सम्भाव्य व्यवहार या विकल्प के आधार पर किया जा सकता है।

¼Xk½ जहॉ तक कि संव्यवहारों या विशेष संबंधों के न्याय की अपेक्षा है।

6- समान दावे का सिद्धान्त ही ऐसा सिद्धान्त है जो लम्बी अवधि में सामाजिक स्थायित्व की तरफ अग्रसर होगा।

सामाजिक न्याय भारतीय संविधान की नींव है। मध्य बीसवीं शती में निर्मित होने वाले इस संविधान के निर्माता न्याय के विभिन्न सिद्धान्तों के प्रयोगों और न्यूनताओं से पूर्णतः अवगत थे। वे न्याय के ऐसे प्रारूप की खोज में थे जो समग्र–क्रान्ति की अपेक्षाओं को पूरा कर सके। पण्डित नेहरू ने संविधान सभा के समक्ष बोलते हुए विचार व्यक्त किया कि 'इस सभा का प्रथम कार्य यह है कि एक नवीन संविधान द्वारा भारत को स्वाधीनता दिलाई जाय जिससे कि भूख से बिलख रही जनता को भरपेट रोटी मिल सके तथा नग्न लोगों को आवश्यक वस्त्र दिए जा सकें, तथा प्रत्येक भारतीय को इस बात का सर्वोत्तम अवसर दिया जाय कि वह अपनी हैसियत के अनुसार अपना विकास कर सके। अपने उदार और लचीले रूप में सामाजिक न्याय सर्वोपयोगी पाया गया। यद्यपि संविधान में कहीं भी सामाजिक न्याय की परिभाषा नहीं की गई हैं फिर भी अनुभूति एक आदर्श तत्व की है जो संविधान का लक्ष्य है। सामाजिक न्याय की अनुभूति एक सापेक्ष अवधारणा के रूप में है जो समय और परिस्थितियों में आर्थिक विषमताओं के साथ–साथ जातिगत और सामुदायिक उत्कृष्टता और निकृष्टता पर आधारित सामाजिक विषमताएं समान रूप से समाधान की अपेक्षा करती हैं। संविधान के अन्तर्गत सामाजिक न्याय का प्रयोग विस्तृत अर्थ में माना गया है जिसमें सामजिक न्याय और आर्थिक न्याय दोनों का समावेश हैं। मुख्य न्यायाधिपति गजेन्द्रगडकर के अनुसार ''इस प्रकार सामाजिक न्याय के विस्तार के अन्तर्गत सभी विषमताओं को दूर करने और सभी नागरिकों को सामाजिक प्रयोजनों के साथ–साथ आर्थिक कार्य–कलापों में समान अवसर प्रदान करने का उद्देश्य सम्मिलित है।'' भारत का संविधान न्याय की किसी एक पारम्परिक विचारधारा–समतामूलक, किया जा सकता है। अथवा इसे प्रदान करने के लिए न्यायालय पूर्व के करारों का विस्तार कर सकता है अथवा नया करार उत्पन्न कर सकता है। इस तरह निरपेक्ष संविदा का स्वतन्त्रता के सिद्धान्त ने सामाजिक न्याय के उच्चतर दावे के लिए रास्ता साफ कर दिया है।

विधिशास्त्रीय विवेचन में यह स्वीकार किया जा सकता है कि भारत में समता की जगह समताकरण के सिद्धान्त, गुणवत्ता पर आधारित वितरणात्मक न्याय की जगह सुधारात्मक न्याय और रॉल्स की उदार व्यक्तिवादिता की जगह प्रतीकरात्मक सामान्य भलाई और नोजिक एवं ड्वाक्रिन की व्यक्तिवादिता की जगह सामाजिक हितों को स्वीकार किया गया है। भारत में रॉल्स की तरह वरीयता को स्वीकार किया गया है। रॉल्स की दूसरी वरीयता को परिमार्जित कर दिया गया है। अस्तु अवसर की समता अलाभकारी स्थिति वालों को वितरण के माध्यम से न्याय देने पर वरीयमान नहीं है। दोनों को सामान्य महत्व देकर 50 प्रतिशत प्रतिकरात्मक न्याय के लिए और 50 प्रतिशत गुणवत्ता पर आधारित समान अवसर की अपेक्षा की गई हैं। संविधान, विधायिका और न्यायालय का झुकाव सामान्य हित और सामान्य पदार्थो एवं संसाधनों के वितरणात्मक माध्यम से लोक कल्याणकारी राज्य की

स्थापना करना है। परन्तु, सामान्य हित या लोक कल्याण उपयोगितावादियों की तरह मात्र व्यतियों की आकांक्षाओं और माँगों का समसुच्चय नहीं है। इसमें क्रियाशील सामाजिक नीति की अपेक्षा है, जो राज्य के सभी सदस्यों के लिए अवसर के असीमित समताकरण को प्राप्त करें।

vkfFkd U;k; % आर्थिक न्याय के तहत यह राज्य के आर्थिक संसाधनों के अपने अधिकार के आधार पर अपने नागरिकों के बीच कोई भेद नहीं होता का विचार किया गया है। आर्थिक न्याय भी राज्य की आय और धन के मामले में वितरणात्मक न्याय से साधन संपन्न और गरीब की खाई को संकीर्ण करने के लिए प्रयास करनेकी आवश्यकता है। राज्य के विभिन्न समाज कल्याण योजनाओं में शामिल करने के लिए आवश्यक है कि सामाजिक और आर्थिक कल्याण के आदर्शो को प्राप्त करने के लिए अनुसूचित जाति/जनुसूचित जनजाति/अन्य पिछड़ा वर्ग, MGREGA, मध्याह्न भोजन योजना, सर्व शिक्षा अभियान आदि योजनाओं का क्रियान्वयन उचित प्रकार से हो।

23-5- lekt dY;k.k d fy, orleku vkfFkd uhfr;k vkj mi{kk

वैश्वीकरण के मॉडल को उच्च उत्पादन और आर्थिक विकास के मामले में देश को समृद्धि लाना होगा कि आशा में अपनाया गया था। दर असल 1991 के बाद से हमारे देश के सकल घरेलू उत्पाद की 8–9: ऊपर चला गया है, और भारत के वैश्विक आर्थिक शक्ति के रूप में उभरा है। भारत विदेशी निवेश के बड़ें सौदों को आकर्षित किया है और अंतरराष्ट्रीय व्यापार की मात्रा कई गुना बढ़ गया है लेकिन यह वैश्वीकरण का लाभ समाज के संभ्रांत वर्गों तक ही सीमित कर दिया गया विद्वानों द्वारा देखा गया है कि सामाजिक कल्याण के मामले में अपने प्रभाव को नकारात्मक कर दिया है।

हमारे देश की आर्थिक नीतियों को पूंजीवाद और निजीकरण के विस्तार पर (1991 के बाद से) और अधिक से अधिक ध्यान केंद्रित कर रहे है और लगातार ध्यान केंद्रित समाज कल्याण के मुद्दों से हटा है नव उदारवादी आर्थिक नीतियों की यह स्वाभाविक नकारात्मक प्रभाव निम्न स्तरों पर पड़ा है :

1- अमीर और गरीब के बीच की खाई को दुनिया भर में चौड़ी हो गई है। वैश्विक स्तर पर आबादी के सबसे अमीर 10: 1980 में, करने के लिए इस्तेमाल सबसे गरीब 10: की तुलना में 79 गुना ज्यादा कमाया, 2003 तक शीर्ष 10: आबादी की आय सबसे गरीब 10: की तुलना में 117 गुना अधिक था। भारत में उच्च सकल घरेलू उत्पाद की दर काफी हद तक समाज के हाशिए पर केवल ऊपरी 10–15: लोग और उदास रोजगार को लाभन्वित किया है। आबादी के शीर्ष 10: राष्ट्रीय धन में 52: के आसपास का एक हिस्सा है, और दूसरे हाथ पर नीचे 10: की हिस्सेदारी 0.21: से कम हो गया है।

2- 1991 कृषि और किसानों से सरकार द्वारा उपेक्षित और सिंचाई के लिए औसत बजटीय व्यय कम से कम 0.35: है 1990–91 में सकल घरेलू उत्पाद के 1. 9: (जीडीपी) था जो कृषि निवेश किया गया था यह 4.37: थी। 9वी योजना में कृषि पर व्यय में लगातार कमी आई है, वर्ष 2003–04 में सकल उत्पाद के 1.3: तक कम हो गया था। 10वी योजना में यह 3.86: थी और 11वी योजना में यह केवल 1. 83: थी वित्त वर्ष 2011–12 के लिए बजट सरकार द्वारा कृषि क्षेत्र की उपेक्षा का

सबसे ताजा उदाहरण है। ''कृषि और संबंधित गतिविधियों'' के लिए बजटीय आवंटन रूपये तक गिर गया। वर्ष 2010–11 के लिए आवंटन की तुलना में 5,422 करोड़ रूपये या 4.3ः की पिछले बारह वर्षों में 2 लाख आत्महत्याओं कृषि क्षेत्र की दयनीय स्थितियों का सबूत है जो किसानों द्वारा की गई थी।

3- लघु उद्योगों को बैंक कर्ज को कम करने में, अधिक से अधिक 3 लाख लघु उद्योगों और अधिक से अधिक तीन लाख हथकरघा और पावरलूम इकाइयों नीचे वैश्वीकरण के प्रभाव के कारण बंद कर दिया गया था। लघु उद्योगों के लिए धन का आवंटन भी प्रतिशत के मामले में लगातार कम हो रहा है; सातवीं पंचवर्षीय योजना में (1985–90) लघु उद्योगों के लिए परिव्यय कुल खर्च का 0.42ः थी, 8$^{वी}$ योजना में यह 0.33ः की कमी हुई है, और 9$^{वी}$ योजना में इसे आगे एस.एस.आई. वैश्वीकरण की स्थापना के समय से पीछे चल रहे थे। विकास के प्रदर्शन के मामले में भी 0.12ः की कमी हुई, वर्ष 1990–91 में विकास दर का प्रतिशत 6.88ः थी, लेकिन वर्ष 2002–03 तक यह 4.69ः की हद तक की कमी की गई है। एसएसआई ग्रामीण और उपनगरीय क्षेत्र में स्वरोजगार उपलब्ध कराने के लिए बहुत महत्वपूर्ण इकाइयां हैं और वे लोगों को आत्मनिर्भर बनाने की क्षमता है। इसलिए सरकार को निश्चित रूप से लघु उद्योगों की उपेक्षा को लोगों के प्रति कल्याण दायित्वों में परिवर्तित करना होगा।

4- कई जगहों पर वातावरण के रूप में च्संबीपउंकंए केरल में कोका कोला संयंत्र द्वारा पानी के प्रदूषण की तरह बहाली के लिए की गई किसी भी कार्यवाई के बिना बड़ी कंपनियों की फैक्ट्रियों द्वारा नुकसान पहुचाया गया था। हिमालय में पेप्सी द्वारा पारिस्थितिक नुकसान, ताजमहल के क्षति द्वारा आगरा के उद्योगों, कानपुर नगर आदि के उद्योगों द्वारा गंगा नदी के प्रदूषण वास्तव में सरकार की ओर से बिलकुल उदासीनता थी और यह विदेशी निवेश की खातिर अक्सर पर्यावरण के साथ छेड़छाड की गई थी। यह सरकार भोपाल आपदा से प्रभावित लोगों को अब तक पर्याप्त मुआवजा प्रदान नही करा पायी है इतना तो है, कार्पोरेट जिम्मेदारी पर्यावरण को लागू करने में नाकाम रही है।

5- यह सरकार की आर्थिक नीतियों के प्रभाव समावेशी और समान विकास में नही हुई है बल्कि बड़ी असमानताएं विभिन्न क्षेत्रों में पैदा हुई है आम तौर पर दक्षिणी राज्यों और पश्चिमी भाषी राज्यों त्वरित आर्थिक विकास दर हासिल कर ली है और उत्तर पूर्वी और देश के मध्य भाग अभी पीछे हैं।

6- आजादी के ही समय से चिंता का एक मुद्दा रहा है जो वित्तीय समावेशन है जो अभी भी एक दूर का सपना है। भारत में आधी आबादी को बैंक खाते उपलब्ध नही है, 90ः लोगों को कोई ऋण के लिए उपयोग या जीवन बीमा कवर है और 98ः पूंजी बाजार में कोई भागीदारी की थी।

23-6 dY;k.kdkjh ik:i dk ikIr dju d fy, l>ko

आज के समय में यह सरकार की नीतियाँ एक कल्याणकारी राज्य के दायित्वों के अनुरूप नहीं रहे हैं। समर्थक कॉर्पोरेट स्टैंड लेने और लागों की दुर्दशा की उपेक्षा करके राज्य एक समतावादी समाज बनाने की अपनी संवैधानिक जिम्मेदारियों से बिमुख हो रहा है। सामाजिक और आर्थिक न्याय प्रदान करने के लिए सरकार की हर नीति में लाभार्थियों को इसके केंद्र में रखा जाना चाहिए, यह सिर्फ उच्च आर्थिक वृद्धि हासिल नहीं कर रहे हैं।

पूर्ववर्ती चर्चा संविधान में निहित सामाजिक कल्याण के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए राज्य के संवैधानिक जिम्मेदारियों के संबंध में निम्नलिखित सुझाव अवलोकित किये जाने चाहिए :

Hkkjrh; lafo/kku dk dY;k.kdkjh ik:i

1- भारत में अभी भी लगभग 58ः लोग कृषि पर निर्भर हैं, इसलिए सरकार सकल घरेलू उत्पाद के साथ ही कुल खर्च के मामले में काफी हद तक कृषि क्षेत्र में सार्वजनिक व्यय में वृद्धि कर सकती है। अधिक धन के रूप में बेहतर गुणवत्ता के बीज के लिए उत्पादन के क्षेत्र में, कृषि में अनुसंधान के क्षेत्र के प्रति समर्पित होना चाहिए।

2- राज्य के समाज के विभिन्न संप्रदायों के बीच गरीबी न केवल खत्म करने के लिए ध्यान केंद्रित करना चाहिए। अपितु गरीबी रेखा से नीचे के व्यक्तियों की वास्तविक संख्या को प्राप्त कर असमानता के स्तर में जो काफी वृद्धि हो रही है उसको कुछ खास वर्गो तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए। यह सुनिश्चित करना चाहिए कि एक फर्म द्वारा अर्जित लाभ को उचित प्रतिशत में श्रम द्वारा साझा किया जाये।

3- राज्य वित्तीय सेवाओं को उपयोग के बिना हाशिए के लोगों को गरीबी के दुष्चक्र से बाहर निकलने के लिए लगभग असंभव है क्योंकि पूरी आबादी कम से कम बुनियादी वित्तीय सेवाओं का उपयोग करने में सक्षम है यह सुनिश्चित करने के लिए माइक्रो फाइनैंस को सुदृढीकरण करना चाहिए। अब तक ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष कोष का सृजन और कमजोर वर्गो के प्रति उदार बनाया बैंकिंग नीतियों को पहुंचने में शाखाओं के विस्तार पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

4- प्रदूषण के प्रभाव (शुद्ध पानी के रूप में) से बचने के लिए पर्याप्त संसाधनों की कमी है क्योंकि कुछ पर्यावरणीय क्षति ने सबसे अधिक प्रभावित लोगों को किया है जो गरीब है। सरकार को भविष्य में कोई पर्यावरणी क्षति को कॉर्पोरेट संस्थाओं के उद्योगों और पौधों की वजह से किया गया है यह सुनिश्चित करना चाहिए और किसी का भी नुकसान किया गया है इसके लिए भुगतान करना होगा।

5- प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद के रूप में दिल्ली के मामले में यह रूपये 29,137 है, और बिहार के मामले में यह रूपये बहुत कम है राज्यों के बीच काफी भिन्नता होती है। 6277 प्रति व्यक्ति आय के आधार पर राज्यों को तीन समूहों में विभाजित किया जा सकता है समूद्ध राज्यों (पंजाब, महाराष्ट्र, हरियाणा, गुजरात, तमिलनाडु), मध्यम आय वाले राज्यों (कर्नाटक, केरल, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश) और गरीब राज्यों (राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, बिहार) और उत्तर पूर्वी क्षेत्र में गरीब के रूप में गिना जाता है, कहने की जरूरत नहीं सरकार शिक्षा, बुनियादी ढांचा, स्वास्थ्य, वित्तीय सेवाओं, और अन्य चीजों के मामले में गरीब राज्यों को तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है।

6- स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में लगभग 46ः बच्चें भारत में कुपोषण के शिकार है, कम से कम 15ः आबादी के पास स्वास्थ्य बीमा या किसी प्रकार सुविधा नहीं है। 66ः के आसपास भारत में गरीब बच्चों को स्वास्थ्य एवं शिक्षा नहीं है या कम से कम माध्यमिक स्तर के लिए वियतनाम (72ः) और श्रीलंका (83ः) जैसे देशों की तुलना में कहीं कम है। भारत में उच्च शिक्षा के लिए नामांकन सिर्फ 12ः है, यह बेहतर स्वास्थ्य और शिक्षा सुविधाओं के बेहतर पेशवरों से पैदा होगा और इसलिए तत्काल सरकार को ध्यान खर्च की वृद्धि, उपयोग के मामले में इन दोनों क्षेत्रों के विकास के लिए भुगतान किया जाना चाहिए।

7- समाज कल्याण की नीतियों की सामग्री बदल जाएगी और राज्य इन बदलती जरूरतों के अनुरूप होना चाहिए, और इन बदलती जरूरतों के अनुसार सेवाएं प्रदान करते समय बदलने के साथ–साथ 1970 के दशक में उदाहरण के लिए कम्प्यूटर शिक्षा समाज का एक अनिवार्य आवश्यकता नहीं थी, लेकिन आज की दुनिया में यह बेहद महत्वपूर्ण है राज्य सवैधानिक रूप से समाज की आवश्यकताओं की देखभाल करने के लिए और सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय को बनाए रखने के लिए बाध्य है, इसलिए इसे केंद्र में लोगों के कल्याण को ध्यान में रखते हुए लोगों की बदलती जरूरतों के साथ–साथ अपनी नीतियों में परिवर्तन करना होगा।

सरकार द्वारा समयबद्ध तरीके से उपरोक्त सुझावों का क्रियान्वयन एक समाजवादी कल्याणकारी राज्य के बारे में अपनी संवैधानिक जिम्मेदारियों को पूरा करने की दिशा में सरकार के इस कदम से मदद मिलेगी।

cks/k iz'u&

fVIi.kh %&

¼d½ नीचे दिये गये स्थान में अपने उत्तर को लिखियें।

¼[k½ अध्याय के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजियें।

1- भारत एक कल्याणकारी राज्य है, इस कथन को समझाइएं?

.....

.....

.....

.....

.....

2- सामाजिक न्याय क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

23-7 Lkkjka'k

राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्त लोक कल्याण से प्रत्यक्षतः जुड़े हुए है। वह सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय पर आधारित सामाजिक व्यवस्था को प्रोत्साहित करते हुए लोक–कल्याण को चरितार्थ करते हैं। राज्य का यह दायित्व है कि वह ऐसी नीतियॉ निर्धारित करें जिनसे सभी की आजीविका सुरक्षित रह सके। उसे हर पुरूष व महिला को समान कार्य के लिए समान वेतन उपलब्ध करना चाहिए। राज्य को चाहिए कि वह सभी कर्मियों, चाहे वे पुरूष हों या स्त्री, के स्वास्थ्य एवं शक्ति का दुरूपयोग न होने दे। राज्य के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार बंटा हो जिससे सामूहिक हित की सर्वोत्तम रूप

से प्राप्ति हो। उसे बंधक या आर्थिक कुर्की के बल पर आधारित किसी भी गैर–स्वैच्छिक कार्य का निषेध करना चाहिए। उसे इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए कि कोई भी व्यक्ति कोई ऐसा कार्य न करे जो उसकी शक्ति व आयु के प्रतिकूल हो। उसे कारखाना में काम करने की परिस्थितियों को भी नियमित करना चाहिए। उसे यह भी अपेक्षा की जाती है कि वह महिलाओं को प्रसूति सेंवाएँ प्रदान करे तथा राज्य को अपने श्रमिकों के लिए काम, निर्वाह मजदूरी, शिष्ट जीवन स्तर और अवकाश का पूर्ण उपभोग सुनिश्चित करने तथा सामजिक और सांस्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का प्रयत्न करेगा। राज्य किसी उद्योग में लगे हुए उपक्रमों, स्थापनों व अन्य संगठनों के प्रंबध में कर्मकारों का भाग सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त विधान द्वारा या किसी अन्य रीति से कदम उठाएगा। निदेशक सिद्धान्त राज्य को यह निर्देश देते है कि वह ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर उद्योगों पर बल दे तथा व्यक्तिगत एवं सहकारी आधार पर व्यापार व उद्योगों को प्रोत्साहित करें। राज्य से यह भी अपेक्षा की जाती है कि वह पशुधन को संरक्षण देगा तथा मवेशियों की समुचित देखभाल करेगा। उसे आदिम जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा समाज के अन्य कमजोर वर्गो के आर्थिक हितों की सुरक्षा के लिए विशेष कदम उठाने चाहिए।

राज्य–नीति के निदेशक सिद्धान्तों से संबंधित संविधान का चौथा भाग सभी भारतीयों के लिए एक समान नागरिक आचार–संहिता की पैरवी करता है ताकि सभी नागरिकों को पारस्परिक समानता तथा राष्ट्रीय एकीकरण का अवसर प्राप्त हो सके। यह 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने के प्रयास करेगा। राज्य से यह भी अपेक्षित है कि वह लोगों के पोषाहार स्तर और जीवन–स्तर को भी ऊँचा करें। राज्य से यह आग्रह किया गया है कि वह जनता के स्वास्थ्य के सुधार को अपना प्राथमिक कर्त्तव्य मानेगा तथा मादक पदार्थो के सेवन पर प्रतिबंध लगाएगा। राज्य कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञाकिन प्रणालियों से संगठित करने का प्रयास करेगा तथा गायों, बछड़ों और अन्य दुधारू पशुओं की नसल सुधार के लिए और उनके वध को रोकने के लिए कदम उठाएगा। संविधान राज्य को यह दायित्व भी देता है कि वह ऐतिहासिक महत्व के स्मारकों की रक्षा करें तथा कला संस्कृति व विज्ञान को अपना संरक्षण दे। राज्य को चाहिए ग्राम–पंचायतों का गठन करे ताकि वे स्थानीय शासन की प्रभावी इकाइयों के रूप में कार्य करे सकें। राज्य को चाहिए कि वह न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक करे ताकि न केवल न्याय ही किया जा सके बल्कि यह लगे भी कि वास्तव में न्याय किया जा रहा हैं।

अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में राज्य से यह अपेक्षा की जाती है कि वह न्यायसंगत व सद्भावपूर्ण संबंधों, अंतर्राष्ट्रीय कानून के नियमों तथा संयुक्त राष्ट्र घोषणा पत्र के सिद्धान्तों के आधार पर शांति व सुरक्षा की दिशा में योगदान देगा। निर्देशक सिद्धान्तों से संबंधित संविधान का अध्याय राज्य को यह दायित्व भी सौंपता है कि वह राष्ट्रीय समानता व सम्प्रभुता से संगत अंतर्राष्ट्रीय शांति व सहअस्तित्व की अनुपालना करें। इसके लिए यह आवश्यक समझा गया है कि भारतीय राज्य अंतर्राष्ट्रीय विवादों के शांतिपूर्ण समाधान द्वारा इन लक्ष्यो को संसाधित करें। 42वें संविधान संशोधन 1976 द्वारा दो नए निर्देशक सिद्धान्त दिये गये है। पहला निर्देश यह है कि राज्य कानून सम्मत रूपसे न्याय उपलब्ध कराने के लिए न्यायालयों, पंचायतों तथा लोक–अदालतों को संकठित करे। इनका प्रावधान इस दृष्टि से किया गया है कि उन की न्यायाालयों तक पहुँच आसान हो सके। न्यायाालयों के दरवाजे खटखटाने के के उनके अधिकार के आगे गरीबी आड़े न आ सके, इसलिए ऐसा किया गया है। राज्य को उक्त संशोधन द्वारा दूसरा निर्देश यह प्राप्त हुआ है

कि वह परिस्थिति की (Ecology) तथा पर्यावरण सुधारने की दिशा में प्रभावी कदम उठाए।

23-8 'kCnkoyh

uhfr funsZ'kd rRo % भारतीय संविधान के भाग 4 में कुछ ऐसे निदेर्शो का उल्लेख हैं जिन्हें पूरा करना राज्य का पवित्रतम कर्त्तव्य माना गया है। उन्हें राज्य के नीति– निर्देशक तत्व कहा जाता है।

lkekftd U;k; % यह वह तरीका है जिसके माध्यम से प्रमुख सामाजिक संस्थाएं–राजनीतिक संविधान एवं मुख्य आर्थिक और सामाजिक व्यवस्थाएं मूल अधिकारों और कर्त्तव्यों का वितरण करती हैं और सामाजिक सहकारिता से लाभों के विभाजन को निर्धारित करती है।

23-9 dqN mi;ksxh iqLrdsa

- प्रसाद, अनिरूद्ध (1996), विधिशास्त्र के मूल सिद्धन्त, ईस्टर्न बुक कम्पनी, दिल्ली।
- कश्यप, सुभाष (1999), हमारा संविधान, नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया, ISBN-237-1913-2।
- पाण्डेय, जय नारायण (2012), भारत का संविधान, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, 45 एडिशन।
- ए.आई.आर. 1995 एससी 922.
- सी नरसिंह राव (2007), *वैश्वीकरण, न्याय, और विकास,* धारावाहिक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 280.।
- बी.बी.सी संवाददाता, (15 अगस्त, 2002) 'कोक हिमालय लाल पेंट्स'।
- बिजनेस स्टैंडर्ड, 'वित्तीय समावेशन पहल जनसांख्यिकीय लाभांश लेने के लिए' (24 जनवरी, 2011)।
- राजेश शुक्ला, 'समावेशी विकास और क्षेत्रीय असमानता' इकनॉमिक टाइम्स (4 जनवरी, 2010)।
- इला पटनायक, 'राज्य में विकास, गरीबी, और बेरोजगारी' (May 09, 2006)।
- एफ0ए0 हेइक (1976), लॉ, लेजिस्लेशन् ऐण्ड लिबर्टी, खण्ड 2, पृ0 62।
- रॉल्स, ए थियरी ऑफ जस्टिस, पृ0 9।
- वही, पृ0 7।
- वही,

- ए0एम0 होनोर, सोशल जस्टिस, रॉबर्ट एस0 समर्स (संकलित) एसेज इन् लीगल फिलॉसफीज, पृ0 91–94।
- मिनर्वा मिल्स ब, भारत संघ, (1980) 3 SCC 625।
- वी0 आर0 कृष्ण अय्यर, सोशल जस्टिस–सनसेट आर डॉन्, 1987, पृ0 53।
- पी0बी0 राजेन्द्रगडकर, लॉ, लिबर्टी ऐण्ड सोशल जस्टिस, 1964, पृ0 77–99।

23-10 cks/k iz'uksa ds mRrj

iFke mRrj % भारत एक व्यापक और विस्तृत लिखित संविधान द्वारा नियंत्रित किया जाता है, जो दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र माना जाता है। लोक कल्याणकारी राज्य का आदर्श राज्य नीति निदेशक सिद्धान्तों में समाहित है। हमारे स्वतंत्रता संग्राम ने सामाजिक पुनर्निर्माण तथा आर्थिक विकास से संबंधित कुछ आदर्श, विचार और धारणाएँ हमें प्रदान की थीं। छुआछूत तथा सामाजिक, आर्थिक विषमताएँ मिटाने का गांधीवादी विचार, ग्रामीण विकास और बुनियादी शिक्षा के कार्यक्रम, छोटे कुटीर उद्योग तथा स्वदेशी आंदोलन कुछ ऐसे विचार और प्रक्रियाएँ थीं जिन्हें गरीबी, बीमारी और निरक्षरता दूर करने के लिए जरूरी समझा गया था।

f}rh; mRrj % सामाजिक न्याय वह गुण है जिसे सामाजिक गतिविधियों में या समाज द्वारा व्यक्तियों और समूह के प्रति व्यवहार में सन्निहित होना चाहिए। रॉल्स के अनुसार यह मानना चाहिए कि प्रथम दृष्ट्या सामाजिक न्याय की अवधारणा एक मानक है जिसके द्वारा समाज की मूल संरचना के वितरणात्मक पहलू का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। यह वह तरीका है जिसके माध्यम से प्रमुख सामाजिक संस्थाएं–राजनीतिक संविधान एवं मुख्य आर्थिक और सामाजिक व्यवस्थाएं मूल अधिकारों और कर्त्तव्यों का वितरण करती हैं और सामाजिक सहकारिता से लाभों के विभाजन को निर्धारित करती है।

****

bdkb&24

Lo;alsoh laxBu dh Hkfedk

bdkb dh :ijs[kk

24-0 mnns';

24-1 iLrkouk

24-2 Lo;alsoh laxBu dk vFkZ

24-3 Lo;alsoh laxBu dh izeq[k fo'ks"krk,a

24-4 LofPNd dk;Z ds izjd rRo

24-5 Lo;alsoh laxBuks ds dk;Z

24-6 Lo;alsoh laxBuks dks jkT; ljdkjks }kjk lgk;rk

24-7 Lo;alsoh laxBuks dks fons'kh lgk;rk

cks/k iz'u

24-8 lkjka'k

24-9 'kCnkoyh

24-10 dqN mi;ksxh iqLrdsa

24-11 cks/k iz'uks ds mRrj

24-0 mnns';

इस इकाई में स्वयंसेवी संगठन की चर्चा की गयी है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

1- स्वयंसेवी संगठन के अर्थ को समझेंगे।

2- स्वयंसेवी संगठन के कार्यों को जानेंगे।

3- स्वयंसेवी संगठनों की सहायता करने वाली संस्थाओं को जानेंगे।

24-1 iLrkouk

भारत में समाज सेवा की परम्परा बहुत प्राचीन है। प्राचीन युग में स्वैच्छिक कार्यकर्त्ता ही जरूरतमंदों के लिए सेवाओं की व्यवस्था करते थे। उन दिनों वेतन पानेवाले प्रशिक्षित कार्यकर्त्ता नहीं थे। उस समय संस्थाएँ भी छोटी थी। अब सभ्यता के विकास के साथ–साथ सामाजिक सेवाओं का संचालन जटिल होता जा रहा है। सामाजिक विज्ञान का विकास हो रहा है। स्वैच्छिक कार्यकर्त्ताओं के पास अब

उतना समय भी नहीं है जितना पहले होता था। इसके विपरीत संस्थाओं का कार्य क्षेत्र बढ़ रहा है। संस्थाओं में प्रशिक्षित कार्यकर्त्ताओं की नियुक्ति की जाने लगी है। अतः अवैतनिक स्वैच्छिक कार्यकर्त्ताओं की जिम्मेदारियों में कुछ परिवर्तन आ रहे है। कार्यकर्त्ता अब नीति निर्धारण, आयोजन तथा पर्यवेक्षण का कार्य–भार संभाल रहे हैं। क्षेत्र में कार्य करने की जिम्मेदारी वेतन पानेवाले प्रशिक्षित कार्यकर्त्ताओं को दी जा रही है।

इस प्रकार आज के युग में भी लाखों नर–नारी स्वेच्छा से सामाजिक संस्थाओं की प्रबन्ध समितियों तथा बोर्डों से सदस्य या अवैतनिक अधिकारी बनकर समाज सेवा में जुटे हुए हैं। जनता द्वारा निर्वाचित स्वैच्छिक कार्यकर्त्ताओं का संस्थाओं में काम करना सामाजिक चेतना तथा जन सहयोग का सूचक है। स्वैच्छिक कार्यकर्त्ताओं की प्रबन्ध समिति लोगतंत्र का आधार है और ये समितियाँ लोकतन्त्र की पद्धतियों के अनौपचारिक प्रशिक्षण केन्द्र हैं।

24-2 Lo;lsoh lxBu dk vFk

समाज कल्याण का मूल प्रारम्भ स्वयंसेवी क्रिया में देखा जा सकता है जिसने इसे पिछली अनेक शताब्दियों से वर्तमान तक जीवित रखा है। भारत में सामाजिक हित के लिए स्वयंसेवी कार्य की गौरवपूर्ण परम्परा रही है। शब्द 'Voluntarism' लैटिन भाषा के शब्द (Voluntas) जिसका अर्थ है 'इच्छा' अथवा 'स्वतंत्रता' से लिया गया है। हैराल्ड लास्की ने 'समुदाय की स्वतंत्रता' (Freedom of Association) को 'रूचिगत उद्देश्यों के वर्द्धन हेतु व्यक्तियों के इकट्ठा होने के लिए मान्यता प्राप्त कानूनी अधिकार के रूप में परिभाषित किया है।' भारतीय संविधान की धारा 19(1)(ब) के अन्तर्गत भारतीय नागरिकों को समुदाय बनाने का अधिकार प्राप्त है। समुदाय की स्वतंत्रता मानव स्वतंत्रताओं में प्रमुख है। यह मनुष्यों के लिए किसी सामान्य उद्देश्य के लिए समुदायित होने की व्यापक स्वतंत्रता है। वे किसी कार्य को स्वयं करने अथवा अपने अथवा अन्य व्यक्तियों के हित को प्राप्त करने हेतु किसी कार्य को कराने, अन्याय अथवा अत्याचार का विरोध करने अथवा किसी महत्वपूर्ण अथवा छोटे, सामान्य अथवा लोग उद्देश्य का अनुधावन करने के लिए इकट्ठा होने की इच्छा रख सकते हैं। संयुक्त राष्ट्र की शब्दावली में स्वयंसेवी संगठनों को अशासकीय संगठन (NGOS) कहा जाता है। इन्हें Volags (Voluntary Agencies), AGS (Action Groups) आदि का नाम भी दिया गया है। स्वयंसेवी संगठन की विभिन्न प्रकार से परिभाषा की गयी है। लार्ड बीवरिज (Lord Beveridge) के अनुसार, ''सही तौर पर स्वयंसेवी संगठन एक ऐसा संगठन है जिसका आरम्भ एवं प्रशासन इसके सदस्यों द्वारा किसी वाह्य नियंत्रण के बिना किया जाता है चाहे इसके कार्यकर्ता वैतनिक अथवा अवैतनिक हो।'' मेरी मोरिस (Mary Morris) एवं मोडलीन रोफ (Modeline Roff) की परिभाषा भी समान है। मोडलीन रोफ ने केवल यह बात जोड़ी है कि स्वयंसेवी संगठनों को कम से कम आंशिक तौर पर स्वयंसेवी संसाधनों पर आश्रित होना चाहिए।

माईकेल बेंटन (Michall Banton) ने इसकी परिभाषा किसी एक सामान्य हित अथवा अनेक हितों के अनुधावन हेतु संगठित समूह कहकर की है। डेविड एल0 सिल्स के शब्दों में, ''स्वयंसेवी संगठन इसके सदस्यों के कुछेक सामान्य हितों की प्राप्ति हेतु राज्य नियंत्रण के बिना स्वैच्छिक सदस्यता के आधार पर संगठित व्यक्तियों का समूह है।''नार्मन जानसन ने स्वयंसेवी समाज सेवाओं की विभिन्न परिभाषाओं की समीक्षा करते हुए इनकी चार प्रमुख विशेषताएं बतलायी हैं :

- संरचना की विधि, जो व्यक्तियों के लिए स्वैच्छिक है।
- प्रशासन की विधि, इसके संविधान, इसकी सेवाओं, इसकी नीति एवं इसके लाभार्थियों के बारे में स्वयं प्रशासकीय संगठन निर्णय करते है।
- वित्त विधि, कम से कम इसका कुछ कोष स्वैच्छिक अभिकरणों से प्राप्त होता है।
- प्रेरक जो लाभ–प्राप्ति नहीं होती।

कुछ लेखकों यथा सिल्स के विचार में स्वयंसेवी संगठनों की विधिक प्रस्थिति इसकी क्रियाओं की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण नहीं है परन्तु भारतीय संदर्भ में यह उनके वित्तीय दायित्व के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। क्योंकि प्रावधान है कि सहायता अनुदानों के लिए केवल ऐसी स्वयंसेवी संस्थाओं पर विचार किया जायेगा जो निगमित हैं तथा जो कम से कम तीन वर्षों से कार्यरत है। स्मिथ एवं फ्रीडमैन स्वयंसेवी संगठनों को औपचारिक रूप में संगठित, सापेक्षतया स्थायी द्वितीयक समूह समझते हैं जो कम संगठित, अनौपचारिक, अस्थायी प्राथमिक समूह से भिन्न होता है। औपचारिक संगठन परिलक्षित होता है– कार्यालयों की अवस्थिति में जिनके कार्मिकों की भर्ती निर्धारित प्रक्रियाओं के माध्यम से होती है, अनुसूचित बैठकों में, सदस्यता के लिए पात्र योग्यताओं में, श्रम के विभाजन एवं विशेषीकरण में, यद्यपि संगठनों में ये सभी विशेषताएं समान मात्रा में नहीं पायी जाती। स्वयंसेवी संगठनों को अपनी स्वायत्तता को पर्याप्त मात्रा में त्यागना पड़ता है क्योंकि यदि यह सरकारी अनुदान लेना चाहती है तो इन्हें कुछेक शर्तों को (यद्यपि इनका स्वरूप नियामक है) स्वीकार करना होता है। उदाहरणतया, भारत में स्वयंसेवी संगठनों को राजनीति एवं धर्म से दूर रहना होता है यदि ये राष्ट्र निर्माण गतिविधियों में भाग लेने हेतु सरकार से धन प्राप्त करना चाहते हैं। यह भारतीय धर्मनिरपेक्षता के अनुरूप है जिसे अन्तर्गत सार्वजनिक धन का किसी धर्म के प्रचार हेतु प्रयोग नहीं किया जा सकता। अंतिम, उन्हें राष्ट्रीय उद्देश्यों, यथा समाजवाद, धर्म निरपेक्षता, प्रजातंत्र, राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता के प्रति कटिबद्ध होना चाहिए।

स्वयंसेवी संगठन की व्यापक परिभाषा का प्रयास करते हुए प्रो0 एम0आर0 इनामदार का कहना है : ''स्वयंसेवी संगठन को समुदाय के लिए स्थायी तौर पर लाभप्रद होने के लिए अपने सदस्यों में सामुदायिक विकास हेतु शक्तिशाली इच्छा एवं भावना का विकास करना होता है, परिश्रमी एवं समर्पित नेतृत्व एवं भारित कार्यों में कुशल व्यक्ति प्राप्त करने हेतु आर्थिक तौर पर क्षय होना होता है।''

24-3- Lo;lsoh laxBu dh izeq[k fo'ks"krk,a
(Main Characteristics of Voluntary Organisation)

स्वयंसेवी संगठन की उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैः

- यह कार्यों के क्षेत्र एवं स्वरूप के अनुसार विधिक प्रस्थिति प्राप्ति हेतु समिति पंजीकरण कानून 1980, भारतीय न्यास कानून 1882, सहकारी समिति कानून 1904 अथवा संयुक्त स्टाक कम्पनी 1959 के अन्तर्गत पंजीकृत होती है।
- इसके निश्चित लक्ष्य, उद्देश्य एवं कार्यक्रम होते है।

- ➢ इसकी प्रशासकीय संरचना एवं विधिवत् संरचित प्रबन्ध एवं कार्यकारी समितियाँ होती है।
- ➢ यह बिना किसी वाह्य नियंत्रण के अपने सदस्यों द्वारा प्रजातंत्रीय नियमों के अनुसार प्रशासित होता है।
- ➢ यह अपने कार्यों के सम्पादन के लिए सरकारी कोष से अनुदानों के रूप में तथा आंशिक तौर पर स्थानीय समुदाय एवं इसके कार्यक्रमों से लाभान्वित व्यक्तियों से अंशदान अथवा शुल्क के रूप में अपनी निधियों को एकत्रित करता है।

24-4- LofPNd dk;l d: i:jd rRo
(Factors Motivating Voluntary Action)

व्यक्तियों को स्वैच्छिक कार्य के लिए प्रेरित करने वाले तत्वों में धर्म, शासन, व्यापार, दानशीलता एवं पारस्परिक सहायता स्वेच्छाचारिता के प्रमुख स्रोत हैं। धार्मिक संस्थाओं का प्रचार उत्साह, सरकारी संस्थाओं की लोकहित के प्रति कटिबद्धता, व्यापार में लाभ प्रवृत्ति, सामाजिक अभिजनों की परोपकारी भावना एवं सहयोगियों के मध्य स्व–सहायता की प्रेरणा सभी स्वेच्छाचारित में परिलक्षित हैं। क्रियात्मक स्तर पर उपर्युक्त संघटकों में भी अधिक अंतर न हो परन्तु प्रत्येक में सेवा की भावना एक सामान्य उत्प्रेरक के रूप में पायी जाती है।

बूराडिलोन एवं विलियम बीवरिज पारस्परिक सहायता एवं मानव प्रेम को स्वैच्छिक सामाजिक सहायता के विकास के दो प्रमुख स्रोत मानते हैं। इनका उद्भव क्रमशः व्यक्तिगत एवं सामाजिक अन्तरात्मा से होता है। स्वैच्छिक कार्य को प्रेरित करने वाले अन्य तत्वों में वैयक्तिक हित यथा अनुभव, मान्यता, ज्ञान एवं मान, कुछेक मूल्यों के प्रति कटिबद्धता आदि को प्राप्त करने की इच्छा को गिना जा सकता है।

इसके अतिरिक्त समाज के अभाग्यशाली व्यक्तियों अथवा अपने संगी–साथियों अथवा स्वयं अपनी सहायता करने के लिए समूह अथवा स्वयंसेवी संगठनों के निर्माण में अनेक प्रकार की भावनाएं मनुष्यों को प्रेरित करती हैं। ये आदर्शवादी, शिक्षात्मक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक होती हैं जो पृथक अथवा भिन्न–भिन्न रूप में मिलकर कार्य करती हैं।

आदर्शात्मक रूप में स्वयंसेवी संगठन प्रजातंत्र एवं व्यक्तियों के व्यक्तित्व को सुरक्षित रखते हैं तथा समाज के सामान्य स्वास्थ्य में योगदान प्रदान करते हैं। वे प्रजातंत्र में समाजीकरण के प्रमुख अंग है तथा अपने सदस्यों को सामाजिक मानकों एवं मूल्यों के प्रति शिक्षित कर अकेलेपन को दूर करने में सहायता करते हैं। मनोवैज्ञानिक भावनाएं व्यक्तियों को सुरक्षा, आत्माभिव्यक्ति एवं परिवार, चर्च एवं समुदाय जैसी सामाजिक संस्थाओं के कारण अपने हितों की पूर्ति हेतु स्वयंसेवी संगठनों के सदस्य बनने की ओर प्रेरित करती है समाजशास्त्रियों ने सदस्यता के मनोविज्ञान का उत्प्रेरक हितों, यथा समुदाय, वर्ग, वंशीय, धार्मिक, लिंग आयु आदि के साथ अध्ययन किया है तथा वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि संगठन से व्यक्ति को अपने साथियों के साथ सामुदायिक भावना की प्राप्ति होती है। सदस्यता का वर्ग आधार होता है जहाँ सामाजिक–आर्थिक हित समिति का सदस्य बनने की ओर प्रेरित करते हैं। वर्ग, वंशता एवं धर्म के रूप में किसी समूह की सदस्यता में

अधिकांशतः समरूपता पाई जाती है। सदस्यता के सामाजिक–धार्मिक प्रस्थिति जिसका मापन आय स्तर, व्यवसाय, गृह स्वामित्व, जीवन स्तर एवं शिक्षा से किया जाता है, के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। नगरीय क्षेत्रों में ग्रामीण की तुलना में स्वयंसेवी संगठन का सदस्य बनने में अधिक रूचि होती है। अधिकांश अभिकरणों में निदेशक मंडलों में मनुष्यों का प्रभुत्व होता है, स्त्रियाँ अपनी पारिवारिक प्रस्थिति तथा परिवार चक्र में उनके स्तर के अनुसार इनकी सदस्यता ग्रहण करती हैं, स्वयंसेवी संगठनों की सहभागिता वृद्धायु के साथ कम हो जाती है।

इस प्रकार स्वयंसेवी संगठन की सदस्यता का मनोविज्ञान एक जटिल घटना है। यह संस्कृति, सामाजिक वातावरण एवं राजनीतिक पर्यावरण पर निर्भर होता है जो एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति एवं एक व्यक्ति समूह से दूसरे व्यक्ति समूह में भिन्न होता है।

24-5- Lo;lloh lxBuk d dk;l **(Functions of Voluntary Organisations)**

प्रजातंत्रीय, समाजवादी एवं कल्याणकारी समाज में स्वयंसेवी संगठन अनिवार्य होते हैं एवं वे अपने सदस्यों के कल्याण, देश के विकास तथा समाज एवं राष्ट्र की एकता एवं अखण्डता के लिए अनेक कार्य करते हैं। इनमें से कुछेक उद्देश्यों एवं कार्यों का वर्णन निम्नलिखित है :

1- मनुष्य स्वभाव से सामाजिक प्राणी है। समूह में कार्य करने की प्रवृत्ति उसमें मौलिक है। अतएव मनुष्य स्वेच्छापूर्वक अपने तथा अन्यों के हित के लिए समूह एवं समितियों की संरचना करते हैं ताकि वे पूर्ण एवं समृद्ध जीवन व्यतीत कर सकें, जैसा मनोरंजक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों, सामाजिक सेवाओं, व्यावसायिक हितों के वर्द्धन हेतु निर्मित स्वयंसेवी संगठनों से परिलक्षित है।

2- प्रजातंत्रीय प्रणालीयुक्त बहुलवादी समाज में सरकार को विभिन्न क्षेत्रों में एकाधिकार विकसित करने से रोकने के लिए व्यक्ति एवं राज्य के मध्य अन्तःस्थ रूप में अनेक स्वतंत्र स्वयंसेवी अशासकीय संगठनों की आवश्यकता होती है। स्वयंसेवी संगठन नागरिकों को शुभ कार्यों में लगाते हैं एवं सरकार के हाथों में शक्तियों के केन्द्रीकरण को रोकते हैं जिससे वह शक्तिभंजक के रूप में कार्य करते हैं। स्वयंसेवी समूह शक्ति में सहभाग द्वारा सेवाओं के संगठन में सरकार को एकाधिकार उपागम का विकास करने से रोकते है।

3- वे व्यक्तियों को अपने निजी संगठनों के प्रशासन में भाग लेकर समूह एवं राजनीतिक कार्य की मौलिकताओं को सीखने का अवसर प्रदान करते हैं।

4- संगठित स्वैच्छिक कार्य विभिन्न राजनीतिक एवं अन्य हितों वाले समूहों एवं व्यक्तियों की सहायता करता है। राष्ट्रीय सुदृढ़ता की भावना को सशक्त बनाता है तथा प्रजातंत्र के सहभागी स्वरूप का वर्द्धन करता है।

5- राज्य के पास नागरिकों की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक वित्तीय साधन एवं मानवशक्ति नहीं होती। स्वयंसेवी संगठन अतिरिक्त साधन जुटाकर सरकार द्वारा पूरी की जाने वाली आवश्यकताओं की पूर्ति तथा स्थानीय जीवन को समृद्ध कर सकता है।

6- स्वयंसेवी संगठन अन क्षेत्रों जो पूर्णतया राज्य का दायित्व है, परन्तु जिनके लिए इसके पास सीमित साधन है, में भी सहायता कर सकते हैं एवं राजकीय संगठनों की तुलना में ऐसे कार्यों को अधिक अच्छी प्रकार निष्पादित कर सकते हैं। उदाहरणतया, शिक्षा राज्य का दायित्व है, परन्तु स्वयंसेवी संगठनों द्वारा चालित एवं प्रबन्धित शिक्षा संस्थाओं की संख्या राजकीय संस्थाओं से कहीं अधिक है तथा इनमें शिक्षा का स्तर भी नमनीयता, प्रयोगीकरण की योग्यता, अग्रणी भावना एवं अन्य गुणों के कारण ऊँचा है। यही बात स्वास्थ्य सेवाओं के बारे में भी है। परोपकारी एवं दानशील संस्थाओं द्वारा चलाये जा रहे अस्पतालों में राजकीय अस्पतालों की तुलना में अधिक अच्छी देखभाल की जाती है। ब्यास में महाराज सावन सिंह दानशील अस्पताल एक विचित्र आधुनिक संस्था है जहाँ हजारों रोगियों का जाति अथवा रंग के भेदभाव के बिना निःशुल्क इलाज होता है तथा भोजन मिलता है।

7- स्वयंसेवी संगठन केवल राज्य क्षेत्रों में ही भूमिका अदा नहीं करते अपितु नयी आवश्यकताओं में जाने का जोखिम उठा सकते हैं, नये क्षेत्रों में कार्य कर सकते है, सामाजिक कुरीतियों को उजागर कर सकते हैं तथा ऐसी आवश्यकताओं जिनकी अभी तक पूर्ति नहीं हुई है अथवा जिनकी ओर ध्यान नहीं दिया गया है की ओर भी ध्यान दे सकते हैं। वे विकास क्रान्ति को दर्शाने वाले निर्माता एवं अभियंता के रूप में कार्य कर सकते हैं। वे सर्वेक्षण दल के रूप में कार्य कर सकते हैं। वे परिवर्तन के अग्रगामी बनकर परिवर्तन को कम कष्टदायक बना सकते हैं। वे प्रगति एवं विकास के लिए कार्य करके कालान्तर में राज्य की गतिविधियों को व्यापकतर क्षेत्रों में विकसित करने में सहायता कर सकते हैं जिससे राष्ट्रीय न्यूनतम की वृद्धि होगी।

8- वे ऐसे व्यक्तियों, जो राज्य की गतिविधियों में राजनीति एवं शासन के माध्यम से भाग लेना पसन्द नहीं करते, को स्वयंसेवी समूहों में संगठित करके गतिविधियों के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं जिससे ऐसे व्यक्तियों के ज्ञान, अनुभव एवं सेवा भावना लोगों की आवश्यकताओं एवं अपेक्षाओं को पूरा करने एवं उनके जीवन को समृद्ध बनाने हेतु समाज में आवश्यक परिवर्तन लाने में उपलब्ध हो जाते हैं।

9- वे व्यक्तियों को ऐसे समूहों, जो राजनीतिक नहीं है तथा किसी भी राजनीतिक दल के सत्ता में आने से जिनका कोई सरोकार नहीं है, परन्तु जो दलगत राजनीति से ऊपर हैं एवं राष्ट्र निर्माण के अन्य क्षेत्रों में रूचि रखते है, में इकट्ठा करके स्थिरकारी शक्ति के रूप में कार्य करते हैं तथा इस प्रकार राष्ट्रीय एकीकरण एवं अराजनीतिक विषयों पर संकेन्द्रीकरण में योगदान देते हैं।

10- वे अपने सदस्यों को उनके कल्याण हेतु सरकार की नीतियों एवं इसके कार्यक्रमों, उनके अधिकारों एवं कर्तव्यों के बारे में शिक्षित करने का कार्य करते हैं तथा बिना किसी भय एवं दृढ़ विश्वास से सरकार की नीतियों एवं गतिविधियों की रचनात्मक आलोचना करने की स्थिति में भी होते हैं जिससे सरकार इन नीतियों एवं प्रोग्रामों से प्रभावित होने वाले लोगों के दृष्टिकोणों को स्थान देते हुए इनमें आवश्यक समंजन कर लेती है, जैसा कि अनुसूचित जनजातियों एवं पर्यावरण संरक्षण से सम्बन्धित कार्यक्रमों के विषय में हुआ है।

11- वे विशेष हितों एवं विशेष समूहों, यथा वृद्ध, विकलांग, महिलाएं, बालक आदि की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयास करते हैं जिन आवश्यकताओं की राज्य द्वारा वित्तीय अभाव के कारण समुचित रूप में पूर्ति नहीं

हो सकती। Age-India एवं Help हम वृद्धों के कल्याणकारी प्रोग्रामों में संलग्न स्वयंसेवी संगठन हैं। भारतीय बाल कल्याण परिषद् बाल कल्याण के वर्द्धन में संलग्न हैं। अखिल भारतीय भूतपूर्व सैनिक कल्याण समिति भूतपूर्व सैनिकों के कल्याण से सम्बन्धित हैं। इसी प्रकार हजारों स्वयंसेवी संगठन अपने–अपने संबन्धित समूहों के हितों की देखभाल करने हेतु वर्तमान हैं।

12- वे अपने लाभार्थियों एवं अपनी संतुष्टि के लिए कार्य करने की बेहतर स्थिति में होते हैं क्योंकि वे अपने निकट व्यक्तियों, समूहों एवं समुदाय की आवश्यकताओं को पहचान कर उनकी पूर्ति हेतु समुचित कार्यक्रम बना सकते हैं, उनकी क्रियान्वयन प्रक्रिया में प्राप्त अनुभवों के प्रकाश में आवश्यक परिवर्तन कर सकते हैं, लोगों की सहभागिता प्राप्त कर सकते हैं, आवश्यक निधि जुटा सकते हैं, लोक विश्वास एवं सहयोग प्राप्त कर सकते हैं। जो सरकारी संगठन के अधिकारी करने में अयोग्य होते हैं।

संक्षेप में, स्वयंसेवी संगठनों के प्रमुख कार्यों में सम्मिलित हैं– व्यक्तियों, समूहों एवं समुदायों की आवश्यकताओं की जानकारी प्राप्त करके समिति बनाने की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार को मूर्त अभिव्यक्ति प्रदान करना इन आवश्यकताओं की सरकारी सहायता, अनुदानों अथवा निजी संसाधनों द्वारा पूर्ति हेतु परियोजनाओं एवं कार्यक्रमों को आरम्भ करना, नागरिकों की न्यूनतम आवश्यकताओं के लिए प्रावधान करने में राज्य के दायित्व में अंशदान देना, अनाच्छादित एवं आपूर्ति आवश्यकताओं के क्षेत्रों की पूर्ति करना, सरकार की एकाधिकार प्रवृत्तियों को रोकना, सेवा भावना से भरपूर व्यक्तियों को लोक कल्याण के वर्द्धन हेतु स्वयं को संगठित करने के अवसर प्रदान करना, नागरिकों को उनके अधिकारों एवं कर्तव्यों के बारे में शिक्षित करना तथा उन्हें उनके कल्याण हेतु सरकारी नीतियों एवं कार्यक्रमों की जानकारी देना, प्रचार माध्यमों द्वारा लोक समर्थन प्राप्त करना, चंदों एवं दान द्वारा वित्तीय संसाधन जुटाना एवं अन्तिम, समाज कल्याण, नागरिकों के जीवन की संवृद्धि एवं राष्ट्र की प्रगति हेतु अराजनीतिक एवं गैर–दलीय प्रकार की गतिविधियों को संगठित करना।

24-6 Lo;lsoh lxBuksa dk jkT; ljdkjksa }kjk lgk;rk
(State Government's Aid to Voluntary Organisations)

केन्द्रीय कल्याण, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, मानव संसाधन विकास, ग्रमीण विकास, पर्यावरण एवं वन मंत्रालयों के अतिरिक्त राज्य सरकारों के विभिन्न विभाग विशेषतया समाज कल्याण विभाग समाज के विभिन्न वर्गों हेतु कल्याण प्रोग्रामों में संलग्न स्वयंसेवी संगठनों को सहायता अनुदान प्रदान करते हैं। परन्तु समाज कल्याण विभागों की कार्यदक्षता को सुधारने की आवश्यकता है ताकि लाभार्थियों को बेहतर सेवा हो सके। हरियाणा सरकार के समाज कल्याण विभाग ने राज्य में परित्यक्त महिलाओं एवं विधवाओं, वृद्धों एवं विकलांग व्यक्तियों हेतु अनेक कल्याण परियोजनाओं के क्रियान्वयन के लिए वर्ष 1988–89 के लिए 141.17 करोड़ रू0 की राशि का प्रावधान किया था, परन्तु इसने फरवरी, 1989 तक बजट प्रावधान का केवल 46 प्रतिशत ही व्यय किया।

हरियाणा विधान सभा की अनुमान समिति ने समाज कल्याण विभाग की सामान्य रूप से तथा स्वयंसेवी संगठनों की विशेष रूप से कार्यप्रणाली को परिष्कृत करने हेतु विभिन्न संस्तुतियाँ एवं सुझाव दिये हैं :

(i) निधियों के अपव्यय को रोकने के लिए विभाग को विभिन्न स्कीमों पर राशि अनुपात में व्यय करनी चाहिए ताकि वर्ष के अंत में इसे लापरवाही से व्यय न किया जा सके।

(ii) विभाग को वित विभाग के साथ विचाराधीन स्कीमों को स्वीकृत कराने हेतु तत्परता एवं ओजस्विता से मामले को अनुसारित करना चाहिए ताकि धन समय पर प्राप्त हो सके एवं स्कीम के उद्देश्य को पूरा किया जा सके।

(iii) विभाग में अनेक पद 1987 से रिक्त पड़े हुए है, इन रिक्त पदों को तुरन्त भरा जाना चाहिए ताकि विभाग में कार्यकुशलता का वर्द्धन हो सके अथवा यदि इनकी आवश्यकता नहीं है अथवा इनको शीघ्र नहीं भरा जा सकता तो इन्हें समाप्त कर दिया जाये।

(iv) स्वयंसेवी संगठनों को सहायता अनुदान हेतु उपायुक्त मे माध्यम से प्रार्थना पत्र देने की वर्तमान प्रक्रिया में काफी समय की बर्बादी होती है, ऐसे प्रार्थनापत्र जिला कल्याण अधिकारी के द्वारा अपनी निरीक्षण रिपोर्ट सहित अग्रेषित किये जाने चाहिए ताकि विभाग से अनुदान समय पर मिल सके।

(v) अनुदानों को समय पर दिये जाने के प्रश्न पर पुनर्विचार किया जाये एवं स्वयंसेवी संगठनों को कोई कठिनाई न हो, इस दृष्टि से स्पष्ट समय सारिणी बना दी जाये।

(vi) सभी स्वयंसेवी संगठनों को सरकारी अनुदानों से क्रय आंशिक अथवा पूर्ण रूप से सभी परिसम्पत्तियों मका रिकार्ड रखना चाहिए तथा इनका प्रयोग केवल निर्दिष्ट उद्देश्यों के लिए ही, जिनके लिए अनुदान दिया गया था किया जाना चाहिए। इन परिसम्पत्तियों को सरकार की पूर्ण सहमति के बिना विक्रय अथवा अन्य किसी प्रकार से प्रयोग न किया जाये।

(vii) स्वयंसेवी संगठनों को वित्तीय सहायता द्वारा अछूते क्षेत्रों में कल्याण सेवाएं तथा नयी कल्याण सेवाएं, जो अभी तक आरम्भ नहीं हुई है, को आरम्भ करने हेतु प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

24-7- Lo;lsoh laxBuks dks fons'kh lgk;rk **(Foreign Aid to Voluntary Organisation)**

भारत में स्वयंसेवी संगठन विकासशील देशों में अपने प्रतिरूपों की भाँति अंतर्राष्ट्रीय स्वयंसेवी अभिकरणों (अशासकीय संगठनों) से भी सहायता प्राप्त करते हैं। कनाडा अंतर्राष्ट्रीय विकास अभिकरण (CIDA) ने देश की चार स्वयंसेवी एजेंसियों, यथा महिला विकास ऐक्शन (WAFD) दिल्ली, सेवागिल्ड (GOS), मद्रास दीपालय शिक्षा समाज (DES), दिल्ली एवं नवयुवक एवं समाज विकास केन्द्र (CYSD) उड़ीसा, को इन संस्थाओं को अंतर्राष्ट्रीय प्लान जो दक्षिणी एशिया में विश्व बाल विकास अभिकरण के माध्यम से सशक्त बनाने हेतु लगभग एक करोड़ रूपयों का अनुदान दिया। समाज कल्याण के क्षेत्र में एक हजार से अधिक अंतर्राष्ट्रीय स्वयंसेवी संगठन कार्यरत हैं। इनमें से भारत में अधिक क्रियात्मक एवं प्रसिद्ध है : 'केअर' Cooperative for American Relief Everywhere (CARE), ऑक्सफोर्ड अकाल राहत समिति (OXFA), विदेश सामुदायिक सहायता (CAA), डेविश अंतर्राष्ट्रीय विकास अभिकरण

(DANIDA) एवं क्रिश्चियन बाल कोष (CCF)। भारत को इनसे सबसे अधिक धन प्राप्त हुआ है। भारत में इन अभिकरणों के कार्यक्षेत्र में सम्मिलित हैं : संकटकालीन एवं विपत्ति राहत, स्वास्थ्य एवं शिक्षा, सामुदायिक विकास, पूरक पोषाहार, महिला, बाल, विकलांग एवं अन्य पीड़ित वर्गों का कल्याण, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक एवं नैतिक स्वास्थ्य विज्ञान, पुनर्वास कार्य, दत्तक देखभाल एवं प्रायोजन आदि।

अंतर्राष्ट्रीय अभिकरण मानव पीड़ा को दूर करने हेतु क्रिश्चियन चिन्ता एवं दानशीलता से प्रेरित होते हैं। अंतर्राष्ट्रीय रैडक्रास (RIC) युद्ध में घायल सैनिकों की चिकित्सीय देखभाल एवं मानवीय व्यवहार तथा सेना में कार्य कर रहे व्यक्तियों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए 1861 में स्थापित सर्वप्रथम वृहद् अंतर्राष्ट्रीय संगठन था। बाद में, इसका कार्यक्षेत्र गंभीर प्राकृतिक विपदाओं के पीड़ित व्यक्तियों को राहत देने तक व्यापक हो गया। 8 मई को प्रत्येक वर्ष संसार में रैडक्रास आंदोलन के जन्मदाता जीन हैनरी डूरन्ट (Jean Henry Durant) जिसने मानव की सेवा में अपना जीवन समर्पित कर दिया, के जन्मदिन की स्मृति में विश्व रैडक्रास दिवस मनाया जाता है। अन्य अनेक समूहों तथा ब्रिटिश सेवा समिति (British Service Committee), अमेरिकन मित्र सेवा समिति (American Friends Service Association), अमेरिकन राहत प्रशासन (American Relief Administration), अंतर्राष्ट्रीय बाल सुरक्षा फंड (International Save the Children Fund) (अब इसे अंतर्राष्ट्रीय बाल कल्याण संघ International Child Welfare Union कहा जाता है, अंतर्राष्ट्रीय प्रवासी सेवा (International Migration Service) (अब इसे International Social Service कहा जाता है) आदि राहत कार्य में अंतर्राष्ट्रीय रैडक्रास के साथ मिलकर कार्य करते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के उपरान्त पूर्वोत्तर गतिविधियों की तुलना में अंतर्राष्ट्रीय स्वयंसेवी अभिकरणों को संख्या एवं उनके उद्देश्यों में भी विशाल वृद्धि हुई है क्योंकि धर्म, नीति, मानवता एवं समाज कार्य द्वारा जनित विश्व–अन्तःकरण का धीरे–धीरे विकास हो रहा है कि धनी एवं निर्धन राष्ट्रों के मध्य असमानता को समाप्त करके तथा सभी देशों में अपराध, अपचार, अनैतिकता एवं अन्याय को रोक करके मौलिक परिवर्तन किये जाने चाहिए।

जब अंतर्राष्ट्रीय स्वयंसेवी अभिकरण दान अथवा किसी धार्मिक अथवा आदर्शवादी संदेश के प्रसार हेतु सहायता अनुदान प्रदान करते हैं तो इसका स्वागत है, परन्तु इसके उत्प्रेरकों पर उस समय शंका हो जाती है जब इसका संबन्ध विकास क्षेत्र से होता है जहाँ दानकर्ता अंतर्राष्ट्रीय अभिकरण की सरकार की राजनीति मुख्य भूमिका अदा करती है। यह इस तथ्य से प्रमाणित है कि कुछेक अशासकीय संगठनों की गतिविधियों ने संसद में उन पर प्रतिबन्ध लगाने की माँग को जन्म दिया है जिसके परिणामस्वरूप आयकर कानून, पंजीकरण कानून एवं विदेशी अनुदान कानून के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय स्वयंसेवी संगठनों के उनके द्वारा दिये गये अनुदानों के स्रोत एवं उद्देश्य की घोषणा करनी होती है।

संबन्धित देश के लोगों को सेवा प्रदान करने के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु यह वांछनीय है कि अंतर्राष्ट्रीय अभिकरणों एवं प्राप्तकर्ता देश की सरकार तथा इसके राष्ट्रीय स्वयंसेवी संगठनों के मध्य सहयोग होना चाहिए परन्तु ऐसा सहयोग वांछित सीमा तक दिखाई नहीं देता, जो शोचनीय है। द्वितीय, भारत में कार्यरत अंतर्राष्ट्रीय स्वयंसेवी अभिकरणों एवं राष्ट्रीय स्वयंसेवी अभिकरणों के मध्य सहयोग का अभाव है जिसके परिणामस्वरूप अंतर्राष्ट्रीय अभिकरणों के मध्य तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवी संगठनों के साथ एवं उनके मध्य किये जाने वाले क्रियाकलापों में

अतिआच्छादन पाया जाता है। अतः अनावश्यक अतिआच्छादन द्वारा बहुमूल्य संसाधनों के अपव्यय को रोकने के लिए समन्वय आवश्यक है। तृतीय, अशासकीय संगठनों को भी अपनी नीति के निर्माण एवं क्रियान्वयन प्रक्रियाओं, विशेषतया धन को इकट्ठा करने हेतु अपील करने के परम्परागत ढंगों जो धीरे–धीरे स्वनिर्भरता की ओर प्रगति करते हुए प्राप्तकर्ता देश के स्वाभिमान के लिए रूचिकर नहीं होता, में परिवर्तन लाना होगा। लेखक ने स्कैन्डेनेवियन देशों में भाषण दौरे के दौरान देश में प्रचलित सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति के उज्ज्वल पक्षों पर प्रकाश डाला, परन्तु श्रोताओं को इसमें संदेह था क्योंकि उन्हें विभिन्न स्थानीय एजेंसियों ने दुष्प्रचार द्वारा यह विश्वास दिला दिया था कि भारत निर्धनता एवं परम्पराग्रस्त देश हैं एवं इस बहु आयामी प्रकार की अपनी अयोग्यताओं पर विजय पाने के लिए सहायता की आवश्यकता थी। चौथे, विदेशी अशासकीय फंड़ों की आवश्यकता के बावजूद इस समय दक्षिणी एशिया के अशासकीय संगठनों एवं दाता अशासकीय संगठनों के मध्य वर्तमान सम्बन्ध के प्रति काफी असंतोष है। शिकायते की गयी है कि प्रार्थनापत्रों पर विचार करने की अफसरशाही प्रक्रियाओं में काफी समय एवं श्रम बर्बाद हो जाता है, प्राप्तकर्ता स्वयंसेवी संगठनों को बहुधा दाता संगठनों के समय एवं श्रेणीकरण की संरचना के अनुसार अपने कार्यक्रमों को रूप देना होता है, दाता देशों में राजनीतिक एवं आर्थिक परिवर्तनों के कारण फंड की निरन्तरता बहुधा अव्यवस्थित हो जाती है। दाता संगठन निर्धारित समय–सीमा जो बहुधा अवास्तविक होती थी, के अन्दर स्वनिर्भरता की शर्त लगाते हैं। दक्षिण एशिया के अशासकीय संगठन दाता के संगठनों के संरक्षक दृष्टिकोण पर आपत्ति उठाते हैं जबकि दाता संगठन एशियन संगठनों की भिक्षुक वृत्ति की शिकायत करते हैं। अतः सहभागिता के आधार पर दाता अशासकीय संगठनों एवं प्राप्तकर्ता के मध्य अधिक समानता सम्बन्ध स्थापित करने की आवश्यकता है।

ck/k i'u&

fVIi.kh %&

¼d½ नीचे दिये गये स्थान में अपने उत्तर को लिखियें।

¼[k½ अध्याय के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजियें।

1- स्वयंसेवी संगठन का अर्थ एवं परिभाषा बताइएं ?

.....

.....

.....

.....

2- स्वयंसेवी संगठन के मुख्य कार्यों को बताइएं ?

.....

.....

.....

.....

24-8 lkjk'k

समाज कल्याण में स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका का दो मौलिक आधारों पर मूल्यांकन किया जा सकता है। सर्वप्रथम, राष्ट्रीय सरकार द्वारा आरम्भित राष्ट्रीय योजना के नियोजन एवं क्रियान्वयन में लोगों की सहभागिता सम्बन्धी पक्ष है। नियोजकों ने प्रजातंत्रीय योजना के बाद लोगों की स्वैच्छिक सहमति प्राप्त करने के लिए ही नहीं, अपितु नियोजन एवं क्रियान्वयन प्रक्रिया में उनकी सकारात्मक सहभागिता प्राप्त करने के लिए बहुधा अपनी उत्कृष्ट इच्छा अभिव्यक्त की है। दूसरे शब्दों में, सरकारी तौर पर निर्मित एवं प्रशासित योजना में अप्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व प्राप्त लोगों अथवा उनके संगठनों को सम्बद्ध करने का ही प्रश्न नहीं है, अपितु विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया में संयुक्त सहभागिता विकसित करना है। वस्तुतः यह सहभागिता प्रजातंत्र की अवधारणा को वास्तविक में रूपान्तरित करने की ओर एक पत्र है।

इस सामान्य उपागम के अतिरिक्त जो प्रजातंत्रीय योजना के अंतर्गत किसी विकासीय परियोजना के बारे में उचित है, समाज कल्याण के क्षेत्र में स्वयंसेवी संगठनों को महत्वपूर्ण भूमिका दिये जाने का एक अन्य औचित्य है। भारत में सामाजिक कार्य के लम्बे इतिहास में स्वयंसेवी संगठनों में सदा महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। चाहे किसी विपदाग्रस्त व्यक्ति अथवा अकाल अथवा बाढ़ से उत्पन्न संकट का मामला था, स्वयंसेवी संगठन सेवा प्रदान करने में आगे आता था। राज्य की भूमिका तत्कालीन शासकों के दृष्टिकोण के अनुसार उदासीनता से लेकर आकस्मिक कभी–कभी परोपकारी रूचि तक बदलती रही है। शताब्दियों तक राज्य सहायता की अपेक्षा सामुदायिक सहायता ही स्वयंसेवी संगठनों का प्रमुख आधार रही है। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त ही राज्य के दृष्टिकोण में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है। संविधान में प्रगतिशील सामाजिक नीति का निरूपण किया गया तथा देश की योजनाओं में कल्याणकारी प्रोग्रामों को उचित स्थान दिया गया।

स्वयंसेवी संगठनों की भूतकालीन सेवाओं को मान्यता देते हुए सरकार ने पुनः कल्याणकारी प्रोग्रामों के विकास में मुख्य दायित्व में स्वयंसेवी संगठनों द्वारा भाग लेने हेतु उनके पक्ष का समर्थन किया है। सरकार की इस नीति के अन्य कारण भी हैं। विश्वास किया जाता है कि राज्य का प्रशासकीय संयंत्र, कल्याणकारी राज्य का भी, प्रकृतिवश अपने स्वभाव में अवैयक्तिक होता है। यह मानवी स्पर्श प्रदान कर सकता है जो स्वयंसेवी संगठन विशेषतया क्षेत्रीय स्तर पर प्रदान कर सकता है। समाज कल्याण कार्य में वैयक्तिक उपागम अधिक आवश्यक है। दूसरा अति महत्वपूर्ण तत्व है, कल्याणकारी प्रोग्रामों हेतु सभी सम्भावित संसाधनों को एकत्रित करने की आवश्यकता। क्योंकि राज्य के अधिकांश संसाधन आर्थिक प्रोग्रामों पर व्यय हो जाते हैं, अतएव समाज कल्याण हेतु राज्य पर्याप्त संसाधन प्रदान करने की स्थिति में नहीं होता। इस कारण समाज को स्वयं इस ओर संसाधनों का प्रावधान करना होता है। तदर्थ सर्वोत्तम प्रकार यही है कि स्वयंसेवी संगठनों को उनके द्वारा प्रदत्त सेवा के आधार पर सामुदायिक सहायता प्राप्त करने की अनुमति दी जाये। संसाधनों को इकट्ठा करने में स्वयंसेवी संगठन सरकार की तुलना में अधिक लाभ की स्थिति में होते हैं, क्योंकि उत्तरोक्त साधारण नागरिक के लिए एक दूरस्थ अवैयक्तिक निकाय है। इसके अतिरिक्त, क्योंकि लोगों की सेवा का प्रत्यक्ष एवं तुरन्त लाभ होता है, अतः वे सहायता देने के लिए अधिक तत्पर होते हैं। स्वयंसेवी संगठनों के सरकारी अभिकरणों की तुलना में अन्य लाभ हैं : कार्यविधियों एवं प्रक्रिया में पर्याप्त नमनीयता, प्रयोगीकरण में स्वतंत्रता एवं तुरन्त कार्यवाही करने की क्षमता।

जबकि सरकार कल्याणकारी प्रोग्रामों के नियोजन एवं क्रियान्वयन में स्वयंसेवी संगठनों को अधिक क्रियाशील भूमिका प्रदान करने के पक्ष में है, आवश्यक है कि स्वयंसेवी संगठन भी उनके प्रति आस्था को युक्तियुक्त प्रमाणित करने के लिए स्वयं को सुचारू रूप से व्यवस्थित करें। सर्वप्रथम, एक ही भू–क्षेत्रों तथा कार्य के समान अथवा मिलते–जुलते क्षेत्रों में कार्यरत संगठनों की बहुलता ने भारत में कल्याण सेवाओं के विकास को आघात पहुँचाया है। इससे संसाधनों का केवल अपव्यय एवं कार्य दोहराव ही होता है। इसका परिणाम यह भी होता है कि कुछ क्षेत्रों में कुछ सेवाओं का केन्द्रीकरण हो जाता है जबकि अन्य क्षेत्र अछूते रह जाते हैं। दूसरे, स्वयंसेवी संगठनों के मध्य उचित समन्वय एवं तालमेल के अभाव में वे न तो अपने विचारों को सशक्त ढंग से प्रस्तुत कर सकते हैं और न अपने दृष्टिकोणों का एकता एवं शक्ति सहित प्रतिनिधित्व कर सकते हैं। इन संगठनों को प्रशिक्षित कार्मिकों की नियुक्ति द्वारा अपनी सेवाओं की गुणवत्ता को भी बेहतर बनाने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त स्वैच्छिक पदाधिकारियों एवं अभिकरण के कार्यकारी स्टाफ के सापेक्ष दायित्व क्षेत्र को स्पष्ट परिभाषित किये जाने की भी समस्या है। कार्यकारी अधिकारियों को उनके तकनीकी योग्यता के कार्यक्षेत्र में पर्याप्त स्वतंत्रता दिये जाने की आवश्यकता है।

परिवर्तित सामाजिक आर्थिक दशाओं के कारण स्वयंसेवी संगठनों के लिए फंड इकट्ठा करना कठिन हो गया है। रेणुका राय समिति 1959 ने विकास एवं भरण–पोषण अनुदानों सहित सहायता अनुदान प्रणाली की सिफारिश की थी। इसके बावजूद भी स्वयंसेवी संगठनों को स्वयं को चालू रखने हेतु बढ़ते हुए व्यय को पूरा करने के लिए पर्याप्त धन इकट्ठा करना होगा। सहायता अनुदान प्रणाली स्वयंसेवी संगठनों के प्रयासों का केवल पूरक हो सकती है। यह भी आवश्यक है कि अपने स्वयंसेवी स्वरूप के संरक्षण हेतु उन्हें राज्य सहायता पर अत्यधिक आश्रित नहीं होना चाहिए। सामुदायिक सहायता की मात्रा संगठन द्वारा प्रदत्त सेवा की सफलता को इंगित करेगी। अमेरिका एवं कनाडा में सामुदायिक कोष पेटियाँ संगठित करने का विचार कुछ वर्षों से प्रचलित है। इस विचार का प्रमुख तत्व यह है कि कोष को नागरिकों की अधिक संख्या से अल्पदान न कि दानवीरों की अल्प संख्या से विशाल दान द्वारा इकट्ठा किया जाये। इस लक्ष्य को सम्मुख रखते हुए समिति ने कहा : ''स्वयंसेवी संगठनों को फंड एकत्रित करने के अपने प्रोग्रामों को पुनर्रूप देना होगा, ताकि वे कुछेक दानवीरों की सहानुभूति की अपेक्षा नागरिकों को विशाल बहुमत की स्वैच्छिक सहायता पर निर्भर हो।''

भारत में स्वयंसेवी संगठनों को विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय अभिकरणों, यथा OXFAM, CARE, CAA, DANIDA, CCF, CIDA आदि से भी राहत कार्य एवं विभिन्न समाज कल्याण एवं विकास प्रोग्रामों के लिए व्यापक विदेशी सहायता प्राप्त होती है। ऐसी सहायता यद्यपि भिक्षा रूप में होती है, परन्तु विकास कार्यों के लिए उनकी उपलब्धता को शंका से देखा जाता है, क्योंकि इसके पीछे कभी–कभी राजनीतिक उद्देश्य होता है। यही कारण है कि सरकार को आय कर कानून, पंजीकरण कानून एवं विदेशी सहायता कानून द्वारा विदेशी सहायता के प्रवाह के ऊपर नियामक नियंत्रण कठोर करना होता है।

सरकार एवं स्वयंसेवी संगठन दोनों जरूरतमंद लोगों को समाज कल्याण सेवाएं प्रदान करने एवं सामाजिक आर्थिक विकास के प्रयास में संलग्न होने के कारण उनमें परस्पर सुखद सम्बन्ध होने चाहिए परन्तु दुर्भागयवश ऐसा नहीं है। सरकार का स्वयंसेवी अभिकरणों के ऊपर नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण करना युक्तियुक्त है, न केवल यह सुनिश्चित करने के लिए कि उन्हें प्रदत्त सहायता अनुदानों का

स्वीकृत उद्देश्यों के लिए ही प्रयोग किया गया है, अपितु यह जानने के लिए भी कि वे जनहित विरोधी उद्देश्यों के लिए एवं कुढंग से तो कार्य नहीं करते। परन्तु सरकार ने अपनी इस शक्ति का प्रयोग वैयक्तिक अथवा राजनीतिक वैरभाव के आधार पर सुविख्यात एवं दीर्घकाल से कार्य कर रहे स्वयंसेवी संगठनों के विरूद्ध जाँच आयोग स्थापित करके उन्हें अपमानित करने की सीमा तक किया है। सरकार एवं स्वयंसेवी संगठनों के मध्य सम्बन्ध 'भागेदारी' का है, अतएव दोनों भागेदारियों को इसी सम्बन्ध के अनुसार कार्य करना चाहिए, स्वतंत्र एवं स्पष्ट विचार विमर्श द्वारा आदान प्रदान की भावना से एक दूसरे के दृष्टिकोण को समंजित करते हुए संघर्ष क्षेत्रों का समाधान करना चाहिए ताकि सामान्य रूप से समाज तथा विशेष रूप से अलाभन्वित व्यक्यिों के हितों की सर्वोत्तम सेवा हो सके। सरकार को वरिष्ठ सहभागी होने के कारण अधिक उदार होना चाहिए एवं स्वयंसेवी संगठनों को राष्ट्रीय हित में उनके कार्य को अधिक उत्तम एवं लाभदायक बनाने के हेतु सरकार द्वारा जारी निर्देशों, आचार संहिता एवं मार्ग दिशाओं का ईमानदारी से अनुसरण करना चाहिए।

24-9 'kCnkoyh

Lo;alsoh laxBu % ''स्वयंसेवी संगठन को समुदाय के लिए स्थायी तौर पर लाभप्रद होने के लिए अपने सदस्यों में सामुदायिक विकास हेतु शक्तिशाली इच्छा एवं भावना का विकास करना होता है, परिश्रमी एवं समर्पित नेतृत्व एवं भारित कार्यों में कुशल व्यक्ति प्राप्त करने हेतु आर्थिक तौर पर क्षय होना होता है।''

jsMØkl % 8 मई को प्रत्येक वर्ष संसार में रैडक्रास आंदोलन के जन्मदाता जीन हैनरी डूरन्ट (Jean Henry Durant) जिसने मानव की सेवा में अपना जीवन समर्पित कर दिया, के जन्मदिन की स्मृति में विश्व रैडक्रास दिवस मनाया जाता है।

24-10 dqN mi;ksxh iqLrdsa %

- A Friedlander Walter (1975), International Social Welfare, Prentice Hall Inc. New Jersey.
- David & Sills, op.cit,pp. 362-363.
- Durgabai Deshmukh, Leadership role of Voluntary Organisation in Social Development and Social Welfare, op, cit., p. 284.
- Freedom of Association in Encyclopaedia of the Social Sciences, Vol.6, New York, Macmillan, 1931, p.447.
- G.D.H. Cole (1945), Voluntary Social Services (ed.) by A.F.C. Bourdilon, Londan, Methuen, p.11.
- M.A. Mutalib, op, cit.
- M.A. Mutalib (1987), Voluntarism and Development- Theoretical Perspectives in the Indian Journal of Public Administration, Vol. XXXIII, No.3, July-Sept..

- Michael Banton, Anthropolitical Aspects, Voluntary Associations in David, L. Sills (ed.) International Encyclopaedia of Social Sciences, Vol. 16, New York The Macmillan Co. & the Free Press. 1968,p.358.
- Michal Banton, Anthropolitical, Voluntary Association in David L. Sills (ed.) International Encyclopaedia of Social Sciences, Vol. 16, New York The Macmillan Co. and the Free Press, 1968, p. 358.
- N.R. Inamdar, Role of Voluntarism in Development, op, cit.
- Norman Johnson (1981), Voluntary Social Services, Oxford, Basit Blackwell and Mortin, Robertson, p.14.
- Report on 'Responding to the challenge of Rural Poverty in South Asia, role of Non-Government Organisations, Bangladesh, April 28- May 2, 1985.
- Seventh Plan, Planning Commission, Govt. of India.
- Smith and Freedman (1972), Voluntary Associations, Perspective in the Literature, Cambridge (Mass), Harward University Press.
- V.M. Kulkarni, op, cit.
- V.M. Kulkarni (1969), Voluntary Action in a Developing Society, Indian Institute of Public Administration, New Delhi, p. 8.
- William Beveridge (1979), Voluntary Action in a Changing World. London, Bedford Square Press. National Council of Social Services, p. 100.

24-11 Ckk/k i'uk d mRRkj

iFke mRRkj % लार्ड बीवरिज (Lord Beveridge) के अनुसार, ''सही तौर पर स्वयंसेवी संगठन एक ऐसा संगठन है जिसका आरम्भ एवं प्रशासन इसके सदस्यों द्वारा किसी वाह्य नियंत्रण के बिना किया जाता है चाहे इसके कार्यकर्ता वैतनिक अथवा अवैतनिक हो।'' मेरी मोरिस (Mary Morris) एवं मोडलीन रोफ (Modeline Roff) की परिभाषा भी समान है। मोडलीन रोफ ने केवल यह बात जोड़ी है कि स्वयंसेवी संगठनों को कम से कम आंशिक तौर पर स्वयंसेवी संसाधनों पर आश्रित होना चाहिए।

f}rh; mRRkj % मनुष्य स्वभाव से सामाजिक प्राणी है। समूह में कार्य करने की प्रवृत्ति उसमें मौलिक है। अतएव मनुष्य स्वेच्छापूर्वक अपने तथा अन्यों के हित के लिए समूह एवं समितियों की संरचना करते हैं ताकि वे पूर्ण एवं समृद्ध जीवन व्यतीत कर सकें, जैसा मनोरंजक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों, सामाजिक सेवाओं, व्यावसायिक हितों के वर्द्धन हेतु निर्मित स्वयंसेवी संगठनों से परिलक्षित है।

- वे व्यक्तियों को अपने निजी संगठनों के प्रशासन में भाग लेकर समूह एवं राजनीतिक कार्य की मौलिकताओं को सीखने का अवसर प्रदान करते हैं।

- संगठित स्वैच्छिक कार्य विभिन्न राजनीतिक एवं अन्य हितों वाले समूहों एवं व्यक्तियों की सहायता करता है। राष्ट्रीय सुदृढ़ता की भावना को सशक्त बनाता है तथा प्रजातंत्र के सहभागी स्वरूप का वर्द्धन करता है।

- राज्य के पास नागरिकों की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक वित्तीय साधन एवं मानवशक्ति नहीं होती। स्वयंसेवी संगठन अतिरिक्त साधन जुटाकर सरकार द्वारा पूरी की जाने वाली आवश्यकताओं की पूर्ति तथा स्थानीय जीवन को समृद्ध कर सकता है।

****

bdkbZ&25

VªLV ,oa lkeqnkf;d laxBuksa dh jpuk ,oa Hkwfedk

bdkbZ dh :ijs[kk

25-0- mn~ns';

25-1- izLrkouk

25-2- VªLV ;k U;klksa dk laxBu

25-2-1- पंजीकरण के लाभ

25-2-2- न्यासों का पंजीकरण

25-2-3- सामान्य सभा

25-2-4- प्रबन्ध–समिति का संगठन

25-2-5- प्रबन्ध–समिति के कार्य

25-2-6- संस्था के पदाधिकारी

25-2-7- प्रधान

25-2-8- उप–प्रधान

25-2-9- महामंत्री

25-2-10- संयुक्त/सहायक मंत्री

25-2-11- कोषाध्यक्ष

25-2-12- प्रबन्ध–समिति के अन्य सदस्य

25-3- lkeqnkf;d laxBu

25-4- lkeqnkf;d laxBu dh Hkwfedk

25-5- lkeqnkf;d laxBu ds dk;Z

25-5-1- अच्छे पड़ोस या सामाजिक चेतना की भावना

25-5-2- सामुदायिक कल्याण केन्द्रों में विशेष समूहों के लिए कार्यक्रम

25-5-3- अपंगों के लिए सहायता

25-5-4- पारिवारिक कल्याण

25-5-5- नेतृत्व का विकास करना

25-6- lkeqnkf;d laxBu dh lLFkk;sa

25-6-1- स्थानीय कल्याण संगठन

25-6-2- सामुदायिक कल्याण संस्थाओं की परिषद् तथा कम्यूनिटी चेस्ट

25-6-3- सहयोगी परिषद

25-6-4- समाज सेवा एक्सचेंज

25-6-5- म्यूनिसिपल बोर्ड अथवा राजकीय कल्याण विभाग का सामुदायिक संगठन विभाग

25-7- x|j ljdkjh lLFkkvks }kjk lkenkf;d lxBu

25-8- {ks=h;] iknsf'kd] jk"Vªh; Lrj dh lLFkk;s

25-9- lkenkf;d lxBu ds dk;ZØe dk vkjEHk

25-10- lkenkf;d dY;k.k ds dk;ZØe

ckks/k iz'u

25-11- lkjka'k

25-12- 'kCnkoyh

25-13- dqN mi;ksxh iqLrds

25-14- ckks/k iz'uksa ds mRrj

25-0- mn~ns';

इस इकाई में ट्रस्ट के संगठन की चर्चा की गयी है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

1- ट्रस्ट के संगठन के सम्बन्ध को समझेंगे

2- सामुदायिक संगठन की भूमिका को समझेंगे

25-1- izLrkouk

सामाजिक संस्था का सीधा संबंध समुदाय के साथ रहता है और समुदाय के लिए संस्था के प्रत्येक सदस्य के साथ अलग–अलग संपक्र और लेन–देन कठिन हो जाता है। इसलिए संस्था के साथ संपक्र और लेन–देन के कार्य को सरल और सहज बनाने के लिए यह जरूरी है कि संस्था को एक इकाई माना जाए और संस्था की ओर से एक व्यक्ति ही संस्था का प्रतिनिधित्व करें। ऐसा तभी संभव होता है जब संस्था को वैधानिक व्यक्तित्व प्राप्त हो, इसके लिए संस्था को समुचित अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत कराना आवश्यक होता है। वैधानिक आधार मिलने पर संस्था में व्यक्तिगत दायित्व का स्थान सामूहिक दायित्व ले लेता है। इस प्रकार संस्था के उद्देश्यों के अनुसार समूचित कानून के अंतर्गत पंजीकृत संस्था को निगमित दर्जा मिल जाता है।

25-2- VLV ;k U;kl dk lxBu

VLV ,o lkenkf;d lxBuk dh jpuk ,o Hkfedk

भारत में प्रायः स्वैच्छिक संस्था की प्रबन्ध–समिति के सदस्य सामान्य सभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित किये जाते हैं। सामान्य सभा की सदस्यता कुछ शर्तों के आधार पर दी जाती है, जिनमें बालिग होना तथा संस्था के विधान में निर्धारित सदस्यता–शुल्क जमा कराना आदि सम्मिलित है। इसके विपरीत पश्चिमी देशों में सदस्यता–शुल्क जमा करने या सदस्यों द्वारा प्रबन्ध–समिति निर्वाचित करने की प्रथा नहीं है। वहाँ सामान्य सभा और प्रबन्ध समिति में कोई भेद नहीं रखा जाता है। पश्चिमी देशों में सामाजिक संस्थाओं में उन्हीं लोगों को सदस्य बनाया जाता है, जो कि संस्था के कामों में रूचि रखते हों अथवा कुछ समय इन कामों के लिए दे सकें। वहाँ की संस्थाओं में बोर्ड सामान्य सभा तथा प्रबन्ध समिति दोनों का काम करते हैं। यद्यपि शुल्क की अदायगी संस्था का सदस्य बनाने के लिए आवश्यक तथा उपयोगी शर्त है, तथापि सदस्यों की नियुक्ति या प्रबन्ध समिति के निर्वाचन के समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक वृत्तिया व्यवसाय के लोग प्रबन्ध समिति में लिए जाएँ, जैसे– व्यापारी, शिक्षक, चिकित्सक, पत्रकार आदि। संस्था में पुरूषों और स्त्रियों दोनों को सदस्यता दी जानी चाहिए। सामान्य सभा का सदस्य बनाने के लिए प्रत्येक संस्था को अपनी एक निर्वाचन–समिति बनानी चाहिए। यह समिति लोगों से मिलकर ऐसे व्यक्तियों को संस्था का सदस्य बनाए, जिनका संस्था के कार्य में अंशदान मिल सके।

25-2-1- ithdj.k ds yHk

स्वैच्छिक कार्यकर्ता अपनी संस्था को पंजीकृत क्यों करवाएँ? इससे उनको, समुदाय को तथा दूसरे समूहों को क्या लाभ है? इसका व्यौरा नीचे दिया जा रहा है :

1- पंजीकृत हो जाने पर संस्था के कार्यों के लिए कोई एक सदस्य उत्तरदायी नहीं होता, अपितु सब सदस्य संयुक्त रूप से उत्तरदायी होते है। समुदाय के सदस्यों के लिए केवल एक ही व्यक्ति के साथ, जिसकी संस्था के विधान द्वारा जिम्मेदारी सौंपी जाती है, सम्पक्र और लेन–देन करना संभव हो जाता है।

2- संस्था (जो कि व्यक्तियों का समूह है) को स्थायी दर्जा मिल जाता है।

3- समाज–कल्याण प्रशासन के विशेषज्ञ श्री एलवुड स्ट्रीट के अनुसार ''एक पूर्त्त अथवा मानवीय संख्या अपने बोर्ड के सदस्यों, वैतनिक कर्मचारियों, निर्वाचन क्षेत्र आदि के संयुक्त चिंतन तथा सामूहिक कार्यवाही का लाभ उठा सकती है।

25-2-2 U;klk dk ithdj.k

इण्डियन ट्रस्ट ऐक्ट द्वारा केवल निजी न्यासों का पंजीकरण होता है। धर्मार्थ या दानार्थ/पूर्त्त न्यास चैरिटेबल ऐण्ड रिलीजियस एण्डोमेण्ट ऐक्ट के अंतर्गत आते हैं। ऐसे न्यास पाँच प्रकार के है :

¼d½ गरीबी हटाने के लिए

¼[k½ शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए

¼x½ धार्मिक कार्यों को बढ़ावा देने के लिए

¼?k½ चिकित्साह तथा राहत के लिए

¼3½ ऐसे अन्य न्यास, जिनका ध्येय समुदाय के लिए लाभप्रद है।

महाराष्ट्र में बंबई चैरिटेबल ट्रस्ट ऐक्ट स्वैच्छिक संस्थाओं के पंजीकरण के लिए लागू किया गया है। वहाँ सोसाइटीज ऐक्ट के अंतर्गत पंजीकृत होने पर भी संस्थाओं पर ट्रस्ट ऐक्ट की धाराएँ लागू होंगी। अधिनियम की धाराओं के अनुसार प्रत्येक संस्था को अपने आय–व्यय का वार्षिक विवरण, प्रबंध समिति के सदस्यों के नाम अथवा पूर्त्त आयुक्त (चैरिटी कमिश्नर) द्वारा माँगी गई अन्य सूचना भेजनी पड़ती है। पूर्त्त आयुक्त संस्था का लेखा–परीक्षण भी करवाता है। यदि संस्था प्रबंध और संगठन–संचालन में अधिनियम की धाराओं का उल्लंघन करती है और आवश्यक सूचना भेजने से इनकार करती है तो आयुक्त उसका पंजीपत्र रद्द कर सकता है। ऐसी व्यवस्था सोसाइटीज रजिस्ट्रेशन ऐक्ट में नहीं है। सदस्य निम्नांकित प्रकार के होते है :

¼d½ सामान्य सदस्य,

¼[k½ अवैतनिक सदस्य,

¼x½ आजीवन सदस्य,

¼?k½ सहयोजित सदस्य (Co-opted member),

¼3½ पदेन सदस्य (Ex-office member) आदि।

प्रत्येक नये सदस्य को संस्था के उद्देश्य, संगठन तथा कार्य–प्रणाली के विषय में पूरी जानकारी देनी चाहिए। उसे संस्था के विषय में रिपोर्ट तथा दूसरे प्रतिलेख देने चाहिए और संस्था के अनुभागों को दौरा कराना चाहिए।

25-2-3- lkekU; lHkk

संस्था के सभी सदस्य सामान्य सभा के सदस्य होते है। सामान्य सभा के निम्नलिखित कार्य होते है :

¼d½ नीति–निर्धारण तथा कायदा–कानून बनाना।

¼[k½ संगृहीत निधि के खर्च पर नियंत्रण रखना।

¼x½ प्रबन्ध–समिति के सदस्यों का निर्वाचन।

¼?k½ संस्था के वार्षिक बजट की स्वीकृति।

¼3½ लेखा–परीक्षक की नियुक्ति।

¼p½ वार्षिक रिपोर्ट पर विचार–विमर्श करके संस्था के कार्य के विषय में जानकारी प्राप्त करना।

¼N½ संस्था के हिसाब–किताब की रिपोर्ट देखना और

¼t½ आवश्यकता पड़ने पर विधान में यथोचित संशोधन आदि करना।

25-2-4 izcU/k&lfefr dk laxBu

स्वैच्छिक संस्थाओं के प्रबन्ध तथा कार्यभार को सुचारू रूप से चलाने के लिए निर्वाचित सदस्यों की प्रबन्ध–समिति अथवा बोर्ड की व्यवस्था उसके संविधान में की जाती है। अब तो सरकारी संस्थाओं में भी जन–सहयोग को प्रोत्साहित करने के लिए सलाहकार समितियों का गठन किया जा रहा है। इस प्रकार ऐसी समितियों के निम्नलिखित लाभ है :

¼d½ बोर्ड के सदस्यों द्वारा समस्याओं पर संयुक्त रूप से चिंतन का लाभ मिलता है, जो कि एक व्यक्ति के लिए संभव नहीं है।

¼[k½ इसके वैतनिक कार्यकर्ताओं पर होने वाले खर्च में किफायत हो सकती है।

¼x½ समुदाय की आवश्यकताओं की जानकारी संस्था तक पहुचाने तथा संस्था की नीति के निर्धारण में सहायता मिलती है।

¼?k½ समिति सदस्यों को लोकतंत्र के तरीकों और लोक–राज की विधियों में अनौपचारिक प्रशिक्षण मिलता है और

¼³½ समुदाय में सेवार्थियों तथा दूसरी संस्थाओं के साथ तालमेल रखने में बहुत सहायता मिलती है।

25-2-5 izcU/k&lfefr ds dk;Z

सामान्य सभा की बैठक सामान्यतया वर्ष में केवल एक बार होती है। संस्था के प्रबन्ध के लिए सामान्य सभा एक प्रबन्ध–समिति निर्वाचित करती है। प्रबन्ध समिति निम्नलिखित कार्य करती है :

¼d½ संस्था के कार्य के नियम बनाती है और उन्हें लागू करती है।

¼[k½ संस्था की नीति निर्धारित करती है, समय–समय पर पुनरीक्षण करती है और कार्यक्रमों का संचालन करती है।

¼x½ प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं द्वारा किये गये कार्य का निरीक्षण करती है।

¼?k½ संस्था के लिए आवश्यक धन संगृहीत करने और इसका हिसाब–किताब रखने का प्रबन्ध करती है।

¼³½ संस्था और समुदाय के बीच तालमेल रखती है।

¼p½ संविधान में संशोधन करने तथा नये कार्यों के लिए नियम बनाने का मसविदा तैयार करके सामान्य संस्था के सामने विचारार्थ रखती है।

¼N½ संस्था की प्रबन्ध–समिति उसकी परिसंपत्ति की संरक्षक होती है।

¼Tk½ विशेष समितियों तथा उप–समितियों की नियुक्ति करती है और उनमें काम का बँटवारा करती है।

25-2-6 laLFkk ds inkf/kdkjh

यद्यपि संस्था के प्रबन्ध–समिति का संयुक्त दायित्व होता है, तथापि समिति द्वारा दैनिक कार्य करने के लिए कुछ अधिकारी निर्वाचित किये जाते हैं ताकि काम का बँटवारा भी हो सके। कई संस्थाओं में पदाधिकारियों का निर्वाचन सामान्य सभा करती है, किन्तु कई ऐसी भी संस्थाएँ है, जहाँ प्रबन्ध–समिति द्वारा इनका निर्वाचन

होता है। कई संस्थाओं में पूर्णकालिक वैतनिक मुख्य कार्यपालक भी नियुक्ति किया जात है। सामाजिक संस्थाओं के प्रबन्ध के लिए निम्नलिखित पदाधिकारी होते है :

¼d½ प्रधान

¼[k½ उप–प्रधान

¼x½ महामंत्री

¼?k½ संयुक्त/सहायक मंत्री

¼3½ कोषाध्यक्ष

¼p½ मुख्य कार्यपालक

¼N½ लेखा–निरीक्षक

यद्यपि अधिकारियों की जिम्मेदारियाँ और कार्य प्रत्येक संस्था में भिन्न हो सकते हैं, तथापि कई ऐसे कार्य हैं जो कि प्रायः सब संस्थाओं के पदाधिकारी करते हैं। ऊपर लिखे प्रत्येक अधिकारी के कार्यों और जिम्मेदारियों का व्यौरा नीचे दिया गया है :

25-2-7 i/kku

1- संस्था का प्रधान सामान्य सभा, प्रबन्ध–समिति तथा दूसरी समितियों की बैठकें बुलाता है और इन बैठकों की अध्यक्षता करता है। इन कामों को पूरा करने के लिए वह निम्नलिखित उत्तरदायित्व निभाता है :

- ❖ समितियों के सदस्यों का निर्वाचन करवाता है और उन्हें काम सौंपता है।
- ❖ समितियों के काम में समन्वय स्थापित करता है।
- ❖ समितियों की बैठकों की कार्य–सूची (Agend) तथा कार्य–वृत्त (Minutè) तैयार करवाता है और उन्हें सदस्यों को भिजवाता है।
- ❖ बैठकों की कार्यवाही को सूचारू रूप से चलाता है और अच्छे वातावरण में फैसले करवाता है।
- ❖ सदस्यों में काम का बँटवारा करता और काम करने में उनकी सहायता करता है।

2- संस्था के मुख्य कार्यपालक तथा दूसरे वरिष्ठ कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए प्रस्ताव रखता है और सुझाव देता है।

- ❖ वह मुख्य कार्यपालक के काम का पर्यवेक्षण करता है और समय पर उसके काम की रिपोर्ट मँगवाता है और वह समिति की बैठकों में रखता है।
- ❖ मुख्य कार्यपालक के कार्य में सहायता करता है।

VLV ,oa lkeqnkf;d lxBuksa dh jpuk ,oa Hkwfedk

3- वह अपनी संस्था और दूसरी संस्थाओं में तालमेल रखता है।

4- संस्था के लिए धन इकट्ठा करवाता है और उसका हिसाब–किताब रखवाता है।

5- संस्था के बैंक के लेखे को चलाने के लिए सांझीदार बनता है।

6- वह संस्था की वार्षिक रिपोर्ट तैयार करवाता है।

7- सामान्य तौर पर प्रधान संस्था के संगठन को मजबूत बनाने तथा उसे सुचारू रूप से चलाने के लिए नेतृत्व प्रदान करता है।

25-2-8 mi&i/kku

यद्यपि उप–प्रधान उस समय काम करता है जब किसी कारणवश प्रधान उपस्थित न हो, पर कहीं–कहीं नियमित तौर पर उप–प्रधान को भी संस्था के कार्यभार का कुछ अंश दिया जाता है। यदि प्रधान चाहे तो उप–प्रधान को अपने दैनिक दायित्वों में कुछ दायित्व सौंप सकता है।

25-2-9 egkea=h

1- वह प्रधान के निर्देशानुसार सामान्य सभा, प्रबन्ध–समिति तथा अन्य समितियों की बैठकें बुलाता है।

- ❖ बैठकों के लिए कार्य–सूची तथा कार्यवृत्त तैयार कर सदस्यों को भेजा जाता है।
- ❖ बैठकों की कार्यवाही सुचारू रूप से चलाने के लिए अध्यक्ष का सहायता करता है।
- ❖ वह प्रत्येक समिति का मंत्री होता है।

2- जिन संस्थाओं में मुख्य कार्यपालक वैतनिक नहीं होता, वहा महामंत्री उसके काम को भी सँभालता है।

- ❖ वह प्रबन्ध–समिति के निर्णयों को कार्यान्वित करता है।
- ❖ वह संस्था की ओर से सब लिखा–पढ़ी करता है।
- ❖ वह संस्था के कार्यालय को चलाता है।
- ❖ कार्य की प्रगति के विषय में प्रबन्ध समिति को समय–समय पर सूचना देता है।
- ❖ संस्था के बैंक लेखे को चलाने में साझीदार होता है।
- ❖ इम्प्रेस्ट लेखे को भी अपने पास रखता है।
- ❖ दूसरी संस्थाओं के साथ तालमेल रखता है।

3- जहाँ जरूरत हो, वहाँ स्वयंसेवकों की भर्ती करता और उनका कार्य बाँटता है।

4- यदि संस्था में वैतनिक मुख्य कार्यपालक हो तो मंत्री उसके तथा प्रधान के बीच समन्वय रखता है और ऊपर (2) में वर्णित कार्य मुख्य कार्यपालक सम्पन्न करता है।

5- वह संस्था की मोहर, आवश्यक अभिलेख, दस्तावेज आदि अपने पास रखता है और संस्था की परिसम्पत्ति को देखरेख करता है।

25-2-10 l;qDRk@lgk;d e=h

प्रायः संयुक्त/सहायक मंत्री महामंत्री की अनुपस्थिति में ही कार्यभार सँभालता है, किन्तु बड़ी संस्थाओं में संयुक्त मंत्री को किसी अनुभाग का पर्यवेक्षण अथवा और कोई जिम्मेदारी भी दी जा सकती है।

25-2-11 dks"kk/;{k

कोषाध्यक्ष का प्रायः निम्नलिखित कार्यभार होता है :

1- कोषाध्यक्ष संस्था के वित्तीय मामलों का जिम्मेदार होता है और संस्था के लिए धन–संग्रह करता और करवाता है।

2- मंत्री तथा मुख्य कार्यपालक की सहायता से वह संस्था का बजट बनवाता है और प्रबन्ध–समिति तथा सामान्य सभा से मंजूर करवाने का जिम्मेदार है।

3- वह संस्था को आय और व्यय का लेखा रखवाता है और उसे परीक्षण करवाकर सभा और समिति को भेजता है।

4- मंत्री अथवा कार्यपालक को दिये इम्प्रेस्ट के हिसाब–किताब पर नियंत्रण रखता है।

5- वह वित्तीय समिति की अध्यक्षता करता है।

6- संस्था के बैंक लेखे को चलाने के लिए उसकी मुख्य जिम्मेदारी होती है। बैंक से पैसे निकालने के लिए चेक पर प्रधान या महामंत्री के अतिरिक्त उसके हस्ताक्षर होते हैं।

7- संस्था के लेखा–परीक्षण में वह सहायता देता है और परीक्षण रिपोर्ट पर अमल करवाने का दायित्व उसपर होता है।

25-2-12 izcU/k&lfefr dk vU; lnL;

निर्वाचित पदाधिकारियों के अतिरिक्त प्रबन्ध–समिति के कुछ अन्य सदस्य भी होते है। इन सदस्यों को पदाधिकारियों के साथ संस्था की नीति तथा कार्य का संयुक्त दायित्व होता ही है, व्यक्तिगत तौर पर भी उनको कुछ जिम्मेदारी दी जाती है। ऐसा करने से उनका सहयोग प्राप्त करने में सहायता मिलती है। उनके लिए कुछ सुझाव इस प्रकार है :

1- संस्था के पदाधिकारियों को जिम्मेदारी निभाने में सहायता करना।

2- संस्था की उप–समितियों का सदस्य बनकर अपनी रूचि तथा अनुभव के अनुसार संस्था के काम में योगदान देना।

3- किसी अुनभाग का पर्यवेक्षण करना।

इस प्रकार प्रबन्ध–समिति के सामान्य सदस्य निम्नलिखित कार्यों में हाथ बटा सकते है :

VLV ,o lkeqnkf;d lxBuk dh jpuk ,o Hkwfedk

- संस्था के विधान अथवा नियमों का निर्माण या उनमें संशोधन करवाना।
- कर्मचारियों को विकास और प्रशिक्षण।
- धन–संग्रह करना।
- हिसाब–किताब रखना।
- भवन–निर्माण, साज–सामग्री खरीदना।
- वार्षिक रिपोर्ट तैयार करना या बैठकों और गोष्ठियों का आयोजन करना।

25-3 lkeqnkf;d lxBu % (Community Organisations)

अनेक प्रकारों और परिणामों के समुदाय विभिन्न प्रकार की सामाजिक बीमारियों के शिकार हैं। केसवक्र की पद्धति से एक–एक व्यक्ति के सम्बन्धों को सुधारने की विशेष रूप से बात करते हैं। वर्ग कार्य का उपयोग व्यक्ति और वर्गगत परिवर्तन लाने के लिए किया जाता है। सामुदायिक संघ का उपयोग समुदाय के सर्वांगीण विकास के लिए किया जाता है। श्री रॉस सामुदायिक संघ की परिभाषा देते हुए कहते हैं कि यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई समुदाय अपनी जरूरतों और अपने लक्ष्यों को पहचानता है। इन जरूरतों या लक्ष्यों की पूर्ति के लिए अपने अन्दर विश्वास और इच्छा शक्ति का विकास करता है। उनके विषय में क्रियाशील होता है तथा ऐसा करने के लिए समुदाय में सहकारी और सामूहिक दृष्टिकोणों और व्यवहारों का विस्तार और विकास करता है। संक्षेप में, समुदाय सामाजिक कल्याण के लिए सामुदायिक संघ का एक मूल मुवक्किल है। समुदाय पड़ोष, शहर, प्रान्त, राष्ट्र या अन्तर्राष्ट्रीय कुछ भी हो सकता है।

समुदाय संघकर्ता समुदाय के सदस्यों में सम्बन्धों की स्थापना करता है, जरूरतों को जानने के लिए सर्वेक्षण करता है, लोगों को साथ मिलाकर योजनाएँ बनाता है, धन इकट्ठा करता है, समुदाय के समाज कल्याण तथा उसकी अन्य सेवाओं के लिए योजनाओं को क्रियान्वित करता है। समाज कल्याण के लिए समुदाय संघों के प्रथम प्रयास 19वीं सदी में इंग्लैण्ड में अत्यन्त निर्धनता की समस्या पर काबू पाने के लिए प्रयास किये गये। 20वीं शताब्दी के आरम्भ से उत्तरी अमरीका में भी समुदाय संघ का प्रयोग किया गया। भारत जैसे विकासशील देश अपने लोगों के विकास और कल्याण के लिए इसका प्रयोग कर रहे हैं। भारतीय संदर्भ में इसका विशेष महत्व इस बात से स्पष्ट है कि भारतीय ग्राम समुदायों की अपने स्व–सहायता कार्यक्रमों में भाग ग्रहण करने तथा अपनी अवस्था सुधारने के लिए अत्यधिक सहायता आवश्यक है। महानगरों के निर्धन क्षेत्रों, झुग्गी–झोपड़ वालों, अनुसूचित जातियों, कबीलों, भूमिहीन श्रमिकों और किसानों इत्यादि की समस्याओं के हल के लिए भी इसकी उपयोगिता उतनी ही महत्वपूर्ण है। 1950 के दशक में हमारे गाँवों में सामाजिक–आर्थिक परिर्वतन और विकास लाने के लिए आरम्भ किये गये सामुदायिक विकास कार्यक्रमों और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं से ग्रामीण विकास के प्रयासों द्वारा वांछित परिणाम प्राप्त न हो सके क्योंकि हमारे अंदर प्रभावशाली सामुदायिक संघीय प्रणाली या पहुँच का अभाव रहा। यदि हम चाहते हैं कि प्रौढ़ शिक्षा, सामुदायिक सेहत, समेकित ग्रामीण विकास, ग्रामोद्योगों का

विस्तार, गरीबों के लिए के अवसर और निर्धनता हटाने के कार्यक्रम सफल हों तो यह आवश्यक है कि सामुदायिक संघीय प्रणाली से युक्त योजना और विकास पद्धति का अधिकाधिक उपयोग हो।

25-4- lkeqnkf;d lxBu dh Hkwfedk

इसमें कोई संदेह नहीं कि नगर में सभी प्रकार के लोग रहते हैं और यहाँ विषमता अधिक होती है। अलग–अलग समूहों के, अलग–अलग विचारों के लोग सहयोग, परस्पर सहायता, अच्छे पड़ोस की भावनाओं के साथ जीवन व्यतीत करें यही सामुदायिक संगठन का मुख्य उद्देश्य है।

यह ठीक है कि बेरोजगारी, कम आयु तथा मकानों की व्यवस्था आदि पर तो सामुदायिक संगठन का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता लेकिन सफाई और अच्छे पड़ोस की भावना जागृत करने से व्यक्ति के साधारण जीवन में सुख की वृद्धि होती है। सामुदायिक विकास के कार्यक्रमों को चलाने के लिए नगरपालिका या महापालिका सहायता प्रदान करती है।

फ्रीडलैंडर के अनुसार सामुदायिक कल्याण के संगठन के द्वारा व्यक्तियों की सामाजिक और स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवायें प्रगति करती है। जिसमें व्यक्तियों की चार मुख्य समस्याओं से रक्षा होती है। चार मुख्य समस्यायें हैं–

¼1½ दूसरों की आश्रयता (Dependency),

¼2½ खराब स्वास्थ्य (Ill Health),

¼3½ असंतुष्ट सांस्कृतिक और मनोरंजन की आवश्यकताएं (Unmet Recreational and Cultural needs),

¼4½ दुःसन्तुलन (Maladjustment) जिससे मानसिक गड़बड़ी बालकों के प्रति उदासीनता, दुर्व्यवहार, बालकों तथा वयस्कों द्वारा अपराध होते है।

यह चारों समस्याएं एक–दूसरे से बहुत सम्बन्धित हैं इसलिए परिवार में एक या सभी समस्यायें एक साथ उठ खड़ी होती है। योजना आयोग कहता है ''शहरों में सामुदायिक संगठन बहुत बड़ा आश्वासन है। शहरों को प्रशासन के लिए कई भागों में बाँटना होगा तथा उन स्थानों में जो बहुत ही पिछड़े इलाके हैं जैसे गन्दी बस्तियां आदि में बहुत ही अधिक समाज कार्य किया जायेगा। शहरी रहन–सहन के द्वारा जीवन सामुदायिक से हटकर व्यक्तिगत होता जा रहा है, इससे बड़ी–बड़ी हानियाँ हैं। इसलिए सामुदायिक केन्द्रों की स्थापना की आवश्यकता है जिससे कि सामुदायिक उत्तरदायित्व, नागरिक गौरव तथा इस भावना का विकसित होता है कि व्यक्तिगत कल्याण भी सामुदायिक प्रयास से अधिक अच्छा हो सकता है। इसके लिए सामुदायिक केन्द्र बहुत ही उत्तम होंगे। स्थानीय नागरिक समूह अपनी सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओं का स्वयं ही मिलकर हल ढूढ़ सकते हैं। आजकल बहुत सी समस्याएं हैं जिन पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता और जो प्रत्येक गरीब सदस्य की दिनचर्या का एक अंग है। सांस्कृतिक केन्द्रों में मनोरंजन के अतिरिक्त इन समस्याओं पर विचार करके हल ढूँढ़ा जा सकता है जिससे कि सामुदायिक जीवन में संतोष की वृद्धि होगी।''

एक नागरिक क्षेत्र में सामुदायिक संगठन के विशिष्ट उद्देश्य नगर के स्वरूप पर तथा कार्यक्रम चलाएं जाने वाले, विशिष्ट क्षेत्रों पर निर्भर करते हैं।

उदाहरणार्थ उन नगरों में जहाँ की जनसंख्या एक लाख से ऊपर है और जहाँ औद्योगिक मजदूरों का जमाव होता है,

- गन्दी बस्तियों के लिए स्वयंसेवी संगठनों द्वारा संचालित कल्याण प्रसार परियोजनायें।
- नगर सामुदायिक विकास योजना के अंतर्गत स्थानीय संगठनों द्वारा संचालित सामुदायिक कल्याण केन्द्र और अन्य कार्यक्रम।
- कार्पोरेशन नियोजन तथा सरकार की सहायता से चलाए गये औद्योगिक श्रमिकों के लिए श्रम कल्याण केन्द्र।
- कतिपय वाधित (Handicapped) समूहों के लिए समाज सेवा समितियों द्वारा प्रदत्त समाज कल्याण सेवाएं।
- सामाजिक संगठनों या लोगों द्वारा किये गये कुछ प्रकार के कार्य इसमें सम्मिलित किये जा सकते हैं।

जबकि छोटे नगर में कार्य प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर बिना किसी वर्ग या जाति के भेदभाव से किया जाता है, क्योंकि जनपदीय खण्डों में विभाजन कम होता है किन्तु विशाल नगरों में कार्यक्रमों को समुदाय के आधार पर किया जा सकता है।

25-5 lkeqnkf;d lxBu d dk;l

25-5-1 vPN iMkl ;k lkekftd pruk dh Hkkouk **(Feeling of Neighborliness of Community Consciousness)**

बड़े–बड़े नगरो में विशेष क्षेत्रों में एक ही प्रकार के लोग रहते हैं। मुख्यतया यह एक ही समूह के सदस्य होते हैं और इनके सम्बन्ध वही से रहते हैं जहाँ से ये लोग शहर में आये थे। इस प्रकार के सामाजिक समूहों में सामुदायिक संगठन अधिक सुचारू रूप से हो सकता है। लेकिन उन क्षेत्रों में जहाँ के लोगों में इस प्रचार का कोई ऐतिहासिक सम्बन्ध नहीं रहा है और जहाँ व्यक्तिवाद का ही बाहुल्य है अच्छे पड़ोस की भावनाएँ जागनी होंगी। इससे सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक समस्याये तो सुलझेंगी ही साथ ही एक ऐसा संगठन बन सकेगा जो समुदाय की आवश्यकताओं का समाधान होगा जिससे समुदाय के उद्देश्यों की प्राप्ति भी हो सकेगी।

एक बार सामुदायिक भावनाओं को जागृत कर दिया जाय तो अनेक शहरी सुविधाओं जैसे, स्वास्थ्य, शिक्षा और मनोरंजन में अधिक उन्नति की जा सकती है। शहरों में शिक्षा तथा चिकित्सा सम्बन्धी सुविधायें राज्य सरकार या नगरपालिका द्वारा दी जाती है लेकिन इन सुविधाओं और कार्यक्रमों, गैरसरकारी कल्याण संस्थाओं तथा समुदायों द्वारा बड़ी सहायता प्रदान की गई है। स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए रोकथाम के उपाय ीाी किये गये हैं। यह उपाय सामुदायिक कार्यक्रमों द्वारा किये गये हैं। समुदाय अपने वातावरण के प्रति बड़ा सचेत रहता है, अतएव स्वास्थ्य को बढ़ाने के लिए सेसे प्रोग्राम हुआ करते है जिनसे बालकों और युवकों का स्वास्थ्य ठीक रहे। इसी प्रकार के कार्यक्रमों से बालकों की स्कूल में

उपस्थिति बढ़ाई जा सकती है तथा छोटे बालकों के लिए शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओं में विशेष रूप से वृद्धि हो सकती है। इसी प्रकार सामाजिक शिक्षा के कार्यक्रमों से समुदाय के व्यक्ति अपनी समस्याओं के प्रति अधिक सचेत हो जायेंगे और बहुत सम्भव है वे मिलकर अपनी समस्याओं का हल भी ढूँढ़ लें।

शहर के एक ही प्रकार के थकाने वाले अपर्याप्त जीवन में बहुत से दुःखों और कष्टों के तथा शहर की विषमताओं को सामुदायिक मनोरंजन ही दूर करते हैं। आराम से शान्ति मिलती है लेकिन मनोरंजन से न केवल थकावट दूर होती है वरन् कुछ समय के लिए व्यक्ति अपने दुःखों और कष्टों को भूल जाता है। मनोरंजन में व्यक्ति को अपनी बात कहने और गुणों को काम में लाने का मौका मिलता है। मनोरंजन के द्वारा बहुत सी सामाजिक बुराइयां जैसे शराब पीना, वेश्यावृत्ति अथवा वेश्यागमन, अपराध व जूआ आदि कम हो जाता हैं। ये समस्यायें विशेष तौर से शहरों में ही पाई जाती हैं भली–भाँति संगठित में मनोरंजन द्वारा बहुत–सी भीषण समाजिक समस्यायें आसानी से हल हो जाती हैं।

25-5-2- lkeqnkf;d dY;k.k dsUnzksa esa fo'ks"k leqgksa ds fy, dk;Øe (Programmer for Special Groups in community welfare Centres)

समुदाय अपने समूहों के लिए कुछ विशेष कार्यक्रम कर सकते हैं जैसे बाल, महिला अथवा युवक–कल्याण के कार्यक्रम। समुदाय के सामुदायिक केन्द्रों में बच्चों के खेलने के लिए मैदान, पुस्तकालय तथा अन्य सुविधायें होती हैं जिससे बालकों के कला कौशल को बढ़ावा मिलता है। इसी प्रकार महिलाओं के संगठन भी हो सकते हैं जो उनके थकाने बाले जीवन में एकबार फिर से शक्ति व स्फूर्ति ला सकते है। युवकों के द्वारा अच्छे पड़ोस व कल्याण के कार्यक्रमों को आगे बढ़ाया जा सकता है। युवक गन्दी बस्तियों के कार्यक्रमों में भाग ले सकते हैं तथा खेल के मैदानों में निर्देशक का काम भी कर सकते हैं। बाल–अपराध को रोकने के लिए युवकों को सलाह देने की सेवाओं की आवश्यकता है। इन सेवाओं के द्वारा वे अपने काम, परिवार तथा विवाह–सम्बन्धी समस्याओं को भी सुलझा सकते हैं।

25-5-3 vikfgtksa ds fy, lgk;rk (Help to Handicapeped)

यह ठीक है कि समुदाओं के पास पर्याप्त साधन नहीं होते लेकिन समुदाय फिर भी अपने अंधे, बहरे, गुँगे और विकृत मस्तिष्क वाले व्यक्तियों तथा भिखारी सदस्यों की देख रेख करता ही है। इस प्रकार के व्यक्तियों की समस्या इतनी बड़ी है कि सरकार यदि भरसक प्रयत्न करे तो भी इस प्रकार के थोड़े ही लोगों को वह सहायता दे सकेगी। इसलिए समुदाय ही इस प्रकार के व्यक्तियों की सहायता का सबसे अच्छा साधन है। इन कार्यक्रमों में राज्य और अच्छी आमदनी के व्यक्ति सहायता करके कार्यक्रम को सफल बना सकते हैं।

25-5-4- ikfjokfjd dY;k.k (Family Welfare)

प्रत्येक समाज में परिवार ही व्यक्ति की सुरक्षा की सबसे बड़ी संस्था है। नगर की विषमतायें ज्यों–ज्यों बढ़ती जाती हैं, परिवार के सामने उतनी ही कठिनाइयां आने लगती हैं। इसलिए परिवार को टूटने से बचाने के लिए संगठित समुदाय कठिनाइयों के समय परिवारों को सहायता प्रदान करते हैं। परिवार के साथ सहयोग करके समुदाय परिवार को स्वास्थ्य, शिक्षा, आर्थिक तथा सम्बन्धों से सम्बन्धित समस्याओं को हल करने के लिए सहायता प्रदान करता है।

VLV ,o lkeqnkf;d lxBuksa dh jpuk ,oa Hkwfedk

बहुत से परिवारों में पुराने रोगी, अपराधी, समाज–विरोधी व्यवहार करने वाले व्यक्ति, विकृत मस्तिष्क तथा पागल व्यक्ति और ऐसे व्यक्ति जो कुछ काम नहीं करते, रहते हैं। सामाजिक सेवायें इस प्रकार की कठिनाइयों में पड़े हुए व्यक्तियों के लिए ही होती हैं। समुदाय यह सेवायें परिवार के इस प्रकार के सदस्यों के लिए आरम्भ कर सकता है।

25-5-5 urRo dk fodkl djuk (To Develop Leadership)

सामुदायिक संगठन के कार्यक्रमों की सफलता स्थानीय नेताओं तथा स्वंय–सेवकों के मिलने पर ही निर्भर करती है जो इन कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने में सहायता प्रदान करेंगे। आरम्भिक अवस्थाओं में कार्यक्रमों को चलाने के लिए प्रशिक्षित सामुदायिक कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की जा सकती है लेकिन इस प्रकार सामुदायिक कार्यक्रम सफल नहीं हो सकते जब तक कि स्थानीय नेता इन कार्यक्रमों में उत्साहपूर्वक भाग लेकर दूसरे व्यक्तियों को भाग लेने के लिए प्रोत्साहित न करें। क्योंकि स्थानीय नेता अपने समुदाय की आवश्यकताओं को अधिक अच्छी तरह समझकर उसी के अनुसार कार्यक्रम बनाकर सफल हो सकते हैं।

25-6 lkeqnkf;d laxBu dh laLFkk;sa (Agencies for Community Organisation)

स्थानीय व्यक्तियों द्वारा कार्यक्रम प्रारम्भ न किये जाने पर अधिकांश खण्डीय सामुदायिक समूह (Regional Community Groups) इस क्षेत्र में काम आरम्भ कर देते हैं। किसी भी समुदाय में जब व्यक्तिगत और समुदायिक कल्याण के लिए सामुदायिक संगठन या विकास का कार्यक्रम आरम्भ किया जाता है तो इस सम्बन्ध में व्यक्तियों के काम न करने की इच्छा, उदासीनता और सुस्ती के दर्शन पहले होते हैं। काम करने की इच्छा लोगों में जगाई जा सकती है और सामुदायिक कल्याण के कार्यक्रम चलाये जा सकते हैं। लेकिन इसके लिए आवश्यक है। (1) एक सुदृढ़ स्थानीय संगठन, (2) एक बाहरी संस्था, (3) किसी नजदीक के समुदाय में किसी कार्यक्रम का विकसित रूप। समुदायिक संगठन की इस प्रकार की संस्थायें निम्नलिखित हैं–

25-6-1 LFkkuh; dY;k.k laxBu (A Local Welfare Organisation)

सामुदायिक कल्याण का स्थानीय संगठन गांवों की भांति चुनी हुई पंचायत जैसी कोई संस्था हो सकती है अथवा यह क्षेत्रीय कल्याण परिषद् हो सकती है जिसमें सभी निवासी सदस्य हो सकते हैं। इस प्रकार के संगठन को पड़ोस–परिषद् (Neighbourhood Council) कहा जा सकता है।

25-6-2 lkeqnkf;d dY;k.k laLFkkvksa dh ifj'kn~ rFkk dE;qfuVh psLV (Council of welfare agencies and community chests)

अमरीका में पड़ोस–परिषद् एक नागरिक कमेटी है जिसका संगठन सामाजिक परिस्थितियों को अच्छा बनाने के लिए होता है। कुछ पड़ोस–परिषदें सेटिलमेंट हाउसेज की नियोजित कमेटी से बनी है। अन्य को सामाजिक संस्थाओं की परिषदों से (Partent teacher association) से या दूसरी नागरिक एवं धार्मिक

समितियों से प्रोत्साहन मिला है। यह पड़ोस–परिषदें अधिकांशतः स्थानीय मनोरंजन की सुविधायें या स्कूल के बच्चों के लिए ग्रीष्म शिविर की सुविधाओं का विकास करती है। यह परिषद् सामुदायिक केन्द्र की स्थाना कर सकती है, उस क्षेत्र में घरों की सफाई की उन्नति का प्रयत्न कर सकती है, वस्तुओं के बढ़ते हुए मूल्य को रोकने के लिए सहकारी उपभोक्ता भण्डार की स्थापना कर सकती है।

इस प्रकार की संस्थाओं की परिषदें बहुत ही अधिक विकसित नगरों में संगठित की जाती है, जहाँ समुदाय के विभिन्न भागों में कल्याण–कार्य करने के लिए बहुत सी संस्थाएं होती हैं।

एक क्षेत्र की अलग–अलग समस्याओं से सम्बन्धित कार्यक्रम चलाने वाली संस्थाओं के प्रतिनिधि मिलकर एक परिषद् का निर्माण करते है जिससे साधन तथा कार्यकर्ता एक स्थान पर केन्द्रित हो जाते हैं। यहाँ से फिर कार्यक्रम की पुनरावृत्ति होकर ऐसे कार्यक्रमों का निर्माण किया जाता है जिनसे कल्याण की अधिकतम वृद्धि हो। अमरीका में सामुदायिक कल्याण संस्थाओं की परिषदें है जिनके उद्देश्य है ''समाज कल्याण सेवाओं तथा सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाओं के कार्यक्रमों में सहयोग, सेवाओं के स्तरों को उन्नति, स्वास्थ्य, कल्याण तथा सामाजिक नियोजन को ऊपर उठाने में समुदाय के नेताओं का विकास।'' समाजकार्य के कार्यक्रमों के व्यय से सम्बन्ध रखने वाली उन्य संस्थाएँ हैं जिनको (Connunity Chest) कहते हैं। इन (Connunity Chest) का उद्देश्य संस्थाओं के कार्यक्रमों को चलाने के लिए धन इकट्ठा करना है। धन इकट्ठा करने के पश्चात् ये संस्थाएं अपनी सदस्य संस्थाओं को उनके कार्यक्रमों के महत्व के अनुसार धन बांट देती हैं। ''एक लाख और इससे अधिक जनसंख्या वाले प्रदेशों में एक सामुदायिम कल्याण परिषद् सम्पूर्ण समुदाय को ध्यान में रखकर कार्यक्रम की योजना बनाने तथा कार्यक्रमों में सहयोग करने के लिए होती है। यह परिषद् उस क्षेत्र में कार्यरत प्रत्येक संस्था के प्रतिनिधियों से बनाई जाती है। कभी–कभी यह मेयर, समाजकार्य से सम्बन्धित अन्य व्यक्तियों द्वारा बना ली जाती है। इस परिषद् में प्रतिनिधित्व करने वाली सामाजिक संस्थाओं में सरकारी संस्थाएँ जैसे– जन–कल्याण विभाग, जन–स्वास्थ्य तथा मनोरंजन विभाग, शिक्षा मण्डल (Board of Education), बाल अपराधियों की कचहरियां आदि होती हैं।'' इस परिषद् में बहुत से विभाग होते हैं जो परिवार–कल्याण, स्वास्थ्य–सेवायें, मनोरंजन, बाल कल्याण (Child Care and Adoption) वृद्धों की सेवायें सामाजिक योजना अन्वेषण; जन सूचना तथा सांख्यकी (Statistics) से सम्बन्धित होते हैं। बहुत से शहरों में कल्याण संस्था परिषद् तथा (Commuuity) का काम करने वाली एक ही संसीा होती है।

25-6-3 lg;kxh ifj"kn **(The coordinating Council)**

इंगलैण्ड और अमरीका में इस प्रकार का काम सबसे पहले दान संगठन समितियों (Charity Organisation Societies) द्वारा किया गया। इसने बड़े नगरों को जिलों में बांट दिया और परिवार की आवश्यकता का पता लगाने के लिए कार्यकर्ता नियुक्ति किए जिनसे यह पता लग जाय कि घर, स्वास्थ्य और रहेने की दशाओं में क्या परिवर्तन की आवश्यकता है। बाद में यह माना गया कि इनका मुख्य कार्य वर्तमान दान एवं सहायता समितियों के बीच सहयोग बढ़ाया है जिससे सेवाएँ व्यर्थ न जायें। सामाजिक संस्थाओं के बीच प्रतिस्पर्द्धा के स्थान पर सहयोग बढ़ाना भी इनके कुछ कार्यो में से एक है।

यह सहयोगी परिषद् नागरिकों का एक समूह होता है जो नगर के साधनों का प्रयोग सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के लिए करता है। इन समस्याओं के

VLV ,oa lkeqnkf;d laxBuksa dh jpuk ,oa Hkwfedk

उदाहरण में हम बालापराध (Juvenicle Delinquency) कह सकते हैं। अमरीका के एक नगर में पाया गया कि एक प्राथमिक विद्यालय के 90 प्रतिशत बालक ऐसे परिवारों में रहते थे जहां आर्थिक तकलीफें थी। यहां पर इस बालापराध को समाप्त करने के लिए साधनों के एकीकरण की आवश्यकता थी जिससे बालकों की ठीक देखभाल, इलाज और इस सम्बन्ध में सलाह दी जा सके। सहयोगी परिषद् के प्रधान जन–कल्याण विभाग और जन–स्वास्थ्य विभाग के अधिकारी होते तथा कार्य–कारिणी में स्थानीय समाज–कल्याण की संस्थाओं के प्रतिनिधि होते थे। इस प्रकार यह बाल–कल्याण की परिषद् बनी। उस शहर में इस परिषद् को सरकारी तथा गैर–सरकारी दोनों प्रकार का सहयोग मिला जिससे एक Child Guidance Clinic की स्थापना हो गई। इस Clinic esa Vocational Councelling Social Service Exchange तथा बृहत् शिक्षा का प्रोग्राम बनाया गया। ''इन सहयोगी परिषदों तथा सामुदायिक कल्याण की परिषदों के कार्यो में अन्तर है। यह परिषद् विशिष्ट सामाजिक प्रश्नों की विवेचना करती है। तथा ऐसे व्यक्तियों व स्थानीय समूहों का सहयोग प्राप्त करती हैं जो सामुदायिक कल्याण परिषद् के कार्यक्रमों में भाग नहीं लेते अथवा जो इस प्रकार की संस्थाओं के सदस्य नहीं हैं।''

25-6-4- lekt lsok ,Dlpsat **(Social Service Exachange)**

यह एक केन्द्रीय संस्था है। यह स्वास्थ्य एवं कल्याण संस्थाओं से जितने भी व्यक्ति सम्बन्धित होते हैं उन सबका नाम अपने यहां रखती है। इसके तीन मुख्य कार्य हैं– (1) उन सामाजिक संस्थाओं के रिकार्ड रखना जिन्होंने इस एक्सचेंज से सम्बन्ध रखा है। (2) यदि सदस्य संस्था प्रार्थना करे तो व्यक्तियों एवं परिवारों के नाम आदि के विषय में पिछले रिकार्ड की सूचना देना। (3) संस्थाओं की व्यक्ति एवं परिवार विशेष के विषय में पूरी जानकारी का विस्तृत ब्योरा देना। समाज सेवा एक्सचेंज की स्थापना सामुदायिक कल्याण परिषद् अथवा गैर–सरकारी संस्थायें करती हैं।

25-6-5 E;qfufLiy cksMZ vFkok jkT; dY;k.k foHkkx dk lkeqnkf;d laxBu foHkkx **(Organisation Divison of a Municipal Board or a branch of State Social Welfare Department)**

विकसित देशों में बड़े–बड़े नगरों की नगरपालिकाओं के कार्य का एक भाग समाज– सेवायें भी होती हैं। कुछ नगरपालिकाओं के इस विभाग में सामुदायिक संगठन की भी एक शाखा होती है जो शहर के विभिन्न भागों में सामुदायिक विकास के कार्यक्रमों का संचालन करती है। भारत के नगरों अभी इस प्रकार का विभाग नहीं है। लेकिन स्वास्थ्य और शिक्षा के कार्यक्रमों के साथ ही साथ सामुदायिक संगठन के कार्यक्रम भी चलाने होंगे। नगरपालिका के यह विभाग विशेष रूप से मनोरंजन केन्द्र व कार्यक्रम, बाल–कल्याण के कार्यक्रम, आवास सम्बन्धी प्रबन्ध व सामुदायिक संगठन की देखभाल करेंग। शहर में मनोरंजन के कार्यक्रमों को चलाने के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षण प्राप्त कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की जा सकती है।

इंगलैण्ड तथा अमरीका में इस कार्यक्रम को (Charity Organisation Societies) ने आरम्भ किया। इन्होंने शहरों को कई भागों में बाँटा और प्रत्येक भाग में एक कार्यकर्ता (Investigator) की नियुक्ति की जो उस क्षेत्र की समस्याओं के पता लगाने का उत्तरदायी था। उसे यह भी बताना था कि किस स्थान पर मकानों के विकास की आवश्यकता है तथा कहाँ पर स्वास्थ्य और रहन–सहन की

दशाओं में सुधार होना चाहिए। बाद में यह मान लिया गया कि इन कार्यकर्ताओं का कार्य दान तथा सहायता की वर्तमान संस्थाओं को सहयोग के सूत्र में बाँधना हैं जिससे पुनरावृत्ति (Overlapping) तथा साधनों की हानि और बर्बादी न हो। इन संस्थाओं में रहने वाले सदस्यों के लिए चन्दा इकट्ठा करने में स्पर्द्धा और प्रतियोगिता न होकर संस्थाओं में सहयोग को प्रोत्साहन देने में भी इन कार्यकताओं की सेवाओं की आवश्यकता थी।

25-7- xj ljdkjh lLFkkvksa }kjk lkeqnkf;d lxBu
(Community Organisation by Individual Social Agencies)

किन्हीं–किन्हीं समुदायों में कुछ विशेष सामाजिक समस्याओं व आवश्यकताओं पर जोर दिया जाता है और समस्याओं को हल करने के लिए किन्हीं विशेष संस्थाओं की स्थापना कर दी जाती है। उदाहरण के लिए किसी समुदाय का स्वास्थ्य केन्द्र समुदाय की अन्य आवश्यकताओं को भी अपने कार्यक्रम में सम्मिलित कर सकता है। अच्छी तरह संगठित समुदायों में मनोरंजन व खेलकूद की सस्यायें, समाज शिक्षा संगठन, राष्ट्रीय महिला संगठन की शाखायें अपने कार्यक्रमों को विस्तृत करके एक सामुदायिक केन्द्र की स्थापना कर सकती हैं। लेकिन ध्यान देने की बात है कि यह काम भी संस्थाओं का सहायक काम है। यह वे तभी कर सकती हैं जबकि वे अपने मुख्य कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न कर लें।

25-8 {k=h;] ikUrh;] dUnzh; Lrj dh lLFkk;sa
(Agencies at Regional, State or Central level)

स्थानीय सामुदायिक संगठन के आकार का हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं। प्रान्तीय स्तर पर संस्थायें हो सकती हैं जो विभिन्न क्षेत्रों की संस्थाओं के कार्यक्रमों को एक सूत्र में बाँध देती हैं। इसी प्रकार की संस्थायें केन्द्रीय स्तर पर भी हो सकती हैं जैसे All India Council of Child Welfare इस प्रकार की संस्थाओं का काम है उस क्षेत्र में काम करने वाली संस्थाओं में सहयोग उत्पन्न करना, इन कार्यक्रमों में जनता का सहयोग प्राप्त करना तथा इनके लिए पर्याप्त स्तरों का निर्धारण करना। इस प्रकार की संस्थाओं में प्रान्तीय स्तर पर क्मचंतजउमदज of Social Welfare, तथा केन्द्रीय स्तर पर Central Social Welfare Board है। बहुत से कार्यक्रमों के अन्तर्राष्ट्रीय संगठन है जो राष्ट्रीय संस्थाओं में एकता तथा प्रणालियों की एकरूपता चाहते हैं।

25-9 lkeqnkf;d lxBu d dk;Øeksa dk vkjEHk

अनुभव द्वारा सिद्ध हो चुका है कि समाज कार्य की प्रणालियों में सामुदायिक संगठन सबसे कम खर्चीला है और इसमें बड़े समुदाय की आवश्यकताओं को समाप्त किया जा सकता है। केवल आरम्भ में सामुदायिक संगठन मेंकुछ अधिक व्यय होता है। परन्तु समुदाय में चेतना (Community Consciousness) आरम्भ होते ही खर्चे को कम किया जा सकता है। चेतना (Consciousness) की जागृति के साथ ही नेतृत्व और समुदाय के साधन भी विकसित होंगे। सामुदायिक संगठन में नगर की योजना के साथ–साथ व्यक्तियों का पुनरूद्धार भी होना चाहिए। प्रत्येक समुदाय में व्यक्तियों के सुख के लिए

उनकी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ फेफड़ों की सफाई के लिए मनोरंजन तथा खेलकूद के मैदान और केन्द्रों का प्रबन्ध भी होना चाहिए। इससे समुदाय के वातावरण की संकीर्णता समाप्त हो जायेगी और सदस्यों के सुख और स्वास्थ्य में वृद्धि होगी।

समुदाय में घर के अन्दर खेले जा सकने वाले खेलों एवं शैक्षिक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों के लिए पर्याप्त स्थान होना चाहिए। सामुदायिक केन्द्र एक विशेष प्रकार का संगठन होता है जिसमें विशेष प्रकार के सांस्कृतिक तथा अन्य कार्यक्रम किये जाते हैं। यह इस प्रकार संगठित किये जाते हैं कि विभिन्न समुदायों के लिए यह सबेरे से शाम तक पर्यापत कार्यक्रम करते हैं। विद्यालय भवन इस काम के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं और इनका आजकल उपयोग भी किया जा रहा है। सामुदायिक केन्द्र के भवन का उपयोग स्वास्थ्य तथा चिकित्सा सम्बन्धी कार्यो के लिए बहुत अच्छी तरह किया जा सकता है। सवेरे के समय इनमें बाल–वाटिकायें चलाई जा सकती है। महिलाओं के कल्याण के लिए कुछ व्यावसायिक कार्यक्रम दिन में चलाये जा सकते हैं। मनोरंजन के लिए शाम को इन केन्द्रों का प्रयोग किया जा सकता है। इन्हीं सामुदायिक केन्द्रों में सहकारी समिति खोलकर आर्थिक अवस्था को सुधारने का भी प्रयत्न किया जा सकता है। केन्द्र सामुदायिक रसोई–घर और अस्थायी उत्पादन केन्द्र भी बन सकते हैं जहाँ पर बेकार और आंशिक रूप से अंपग व्यक्तियों को काम दिया जा सकता है।

इसमें सन्देह नहीं कि कार्यक्रम प्रारम्भ करने लिए प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं तथा अन्य संगठनों से सहायता ली जा सकती है लेकिन इस प्रकार की सहायता अस्थायी होगी और यह सहायता तभी हटा ली जायगी जब समुदाय में चेतना के लक्षण आने लगें और समुदाय अपने उत्तरदायित्वों का वहन स्वयं करने लगे। कुछ थोड़े समय के लिए कार्यक्रम की देख–रेख करने के लिए कुछ वैतनिक कार्यकर्ता रखे जा सकते हैं। जब सामुदायिक संगठन के फलस्वरूप समुदाय कल्याण की कमेटी बन जाय जिसमें स्थानीय युवक तथा महिला कल्याण की संस्थाओं के प्रतिनिधि और पंचायत के कुछ सदस्य हों तो नगरपालिकाओं को चाहिए कि वे इस सम्बन्ध में नीति निर्धारण करना, कार्यक्रम प्रारम्भ करना तथा सामुदायिक संगठन पर नियंत्रण और देखभाल करने के कमा करें। लेकिन ध्यान देने का विषय है कि कार्यक्रम का संचालन स्थानीय निवासियों के हाथ में ही रहना चाहिए।

25-10- lkeqnkf;d dY;k.k ds dk;Øe **(Programmes for Community Welfare)**

हमने पहले ही सामुदायिक संगठन के विशिष्ट उद्‌देश्यों में यह बता दिया है कि स्थानीय समुदाय अन्य स्थानीय संस्थाओं से सहयोग करके सामुदायिक हित के कौन से कार्य कर सकता है।

समुदाय के हित में सबसे आसान और महत्वपूर्ण कार्य घरों की व्यवस्था, सफाई और वातावरण को ठीक रखना है। यह ठीक है कि घरों का प्रबन्घ का उत्तरदायित्व उन व्यक्तियों और अधिकारियों पर है जो इन्हें बनवाते और रहने के लिए देते हैं। फिर भी समुदाय के प्रारम्भिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि उन व्यक्तियों में अच्छे सम्बन्ध हों जो सेवाओं को चलाते हैं और जो सेवाओं से लाभ उठाते हैं सामुदायिक संगठन में किराएदारों के अधिकारों की सुरक्षा हो सकती है। इसके लिए किराएदारों की एक परिषद् भी बनाई जा सकती है जिसके द्वारा

अच्छे पड़ोस की भावनायें तथा वातावरण में सफाई इत्यादि का प्रबन्ध किया जा सकता है।

दूसरा महत्वपूर्ण कार्य सामुदायिक मनोरंजन का है। लेकिन बहुआ देखा जाता है कि सामुदायिक मनोरंजन के केन्द्रों तथा शहर के अन्य मनोरंजन के केन्द्रों के आकर्षण में संघष्र हो जाता है। जीवनयापन के भीषण संग्राम (Struggle for existence), उत्साह–हीनता, साधनों और नेतृत्व का अभाव कुछ ऐसे तत्व हैं जिनके कारण बड़े–बड़े शहरों में रहने वाले व्यक्तियों के मनोरंजन की भावना का विनाश होने लगता है। मनोरंजन में अधिक से अधिक व्यक्ति भाग लें इसके लिए मनोरंजन के कार्यक्रमों में विविधता होनी चाहिए। कार्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए कि बालक, बालिकायें, युवक, महिलायें और वृद्ध सभी आयुओं के व्यक्ति उसमें भाग ले सकें।

cks/k i'u&

fVIi.kh %&

¼d½ नीचे दिये गये स्थान में अपने उत्तर को लिखियें।

¼[k½ अध्याय के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजियें।

1- ट्रस्ट के कार्य बताइए ?

.....
.....
.....
.....

2- सामुदायिक संगठन क्या है ?

25-11 lkjk'k

सामुदायिक संगठनों के मध्य एकता एवं सशक्तता की तुरन्त आवश्यकता हैं। इन संगठनों में अकेले रहकर अपना छोटा सा साम्राज्य स्थापित करने, कभी–कभी अपने लक्षित समूह के क्षेत्र में व्यक्तियों एवं भूखण्ड़ों की वास्तविक रूप में सीमांकन करके कार्य करने की प्रवृत्ति पायी गयी है। एकता के अभाव का कारण दुर्भाग्यवश व्यक्तित्व की समस्याएं एवं अविश्वास, अल्प संसाधनों के लिए प्रतियोगिता, दानित निधियों की सुगम प्राप्ति, कुछेक दानकर्ता संगठनों की विभाजक नीति, उपागम, कार्यक्रमों एवं रणनीतियों में अंतर तथा कभी–कभी विचारीय मतभेद का परिणाम है। अंतिम, आंतरिक लड़ाई झगड़े एक दूसरे के प्रयासों की जड़े खोदना एवं सामुदायिक संगठनों की वर्तमान अस्त व्यस्तता कुछ ऐसी बाते है जिन्हें समाप्त किया जाना चाहिए। क्योंकि गैर–सरकारी संगठन

आंदोलन की कमजोरी संसाधनों का अभाव नहीं है जितना की इस क्षेत्र में है। अतएव, आत्म विश्लेषण सामान्य विचार धारा एवं सामान्य कार्य इस आंदोलन की कुंजी है।

25-12 'kCnkoyh

1- lkeqnkf;d lxBu : यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई समुदाय अपनी जरूरतों और अपने लक्ष्यों को पहचानता है। इन जरूरतों या लक्ष्यों की पूर्ति के लिए अपने अन्दर विश्वास और इच्छा शक्ति का विकास करता है।

2- VLV % इण्डियन ट्रस्ट ऐक्ट द्वारा केवल निजी न्यासों का पंजीकरण होता है। धर्मार्थ या दानार्थ/पूर्त न्यास चैरिटेबल ऐण्ड रिलीजियस एण्डोमेण्ट ऐक्ट के अंतर्गत आते हैं।

25-13- dN mi;kxh iLrd

- मदन, जी0आर0(1985), समाज कार्य, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
- चौधरी, धर्म पाल (1973), समाजकल्याण प्रशासन, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना।
- सचदेव, डी0आर0 (2008), भारत में समाज कल्याण प्रशासन, किताब महल, इलाहाबाद।

25-14 ck/k i'uk d mRRkj

iFke mRrj %& समुदाय सामाजिक कल्याण के लिए सामुदायिक संघ का एक मूल मुवक्किल है। समुदाय पड़ोष, शहर, प्रान्त, राष्ट्र या अन्तर्राष्ट्रीय कुछ भी हो सकता है। समुदाय संघकर्ता समुदाय के सदस्यों में सम्बन्धों की स्थापना करता है, जरूरतों को जानने के लिए सर्वेक्षण करता है, लोगों को साथ मिलाकर योजनाएँ बनाता है, धन इकट्ठा करता है, समुदाय के समाज कल्याण तथा उसकी अन्य सेवाओं के लिए योजनाओं को क्रियान्वित करता है।

f}rh; mRrj %&

- गरीबी हटाने के लिए
- शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए
- धार्मिक कार्यों को बढ़ावा देने के लिए
- चिकित्साह तथा राहत के लिए
- ऐसे अन्य न्यास, जिनका ध्येय समुदाय के लिए लाभप्रद है।

****

bdkbZ&26

ekuo vf/kdkj ,oa lkekftd U;k;

bdkbZ dh :ijs[kk

26-0- mn~ns';

26-1- izLrkouk

26-2- ekuokf/kdkj % vFkZ] ladYiuk ,oa izd`fr

26-3- lS)kfUrd ;k nk'kZfud fl)kUr ls lEcfU/kr nf’Vdks.k

26-3-1 प्राकृतिक अधिकार सिद्धान्त

26-3-2 विधिजन्य अधिकार सिद्धान्त

26-3-3 अधिकार का सामाजिक कल्याण सिद्धान्त

26-3-4 अधिकार का आदर्शवादी सिद्धान्त

26-3-5 अधिकार का ऐतिहासिक सिद्धान्त

26-4- mi;ksfxrkoknh ;k O;ogkjoknh lS)kfUrd nf’Vdks.k

26-5- ekuof/kdkjksa dk oxhZdj.k

26-5-1 प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकार

26-5-2 द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकार

26-5-3 तृतीय पीढ़ी के मानवाधिकार

26-6- ekuokf/kdkj dh ladYiuk

26-7- lkekftd U;k;

26-8- lkekftd U;k; dk vFkZ

26-9- lkekftd U;k; dh vo/kkj.kk

26-10- lkjka'k

26-11- 'kCnkoyh

26-12- dqN mi;ksxh iqLrdsa

26-13- cks/k iz'uksa ds mRrj

26-0 mn:n';

इस इकाई में मानवाधिकार की चर्चा की गयी है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

1- मानवाधिकार के अर्थ को समझेगें।

2- मानवाधिकार के प्रकारों के बारे में जानेगें।

3- सामाजिक न्याय क्या है इसको समझेगें।

26-1 iLrkouk

जैसा कि नाम से स्पष्ट होता है, मानवाधिकार अर्थात् मानव के अधिकार। मानवाधिकार की अवधारणा के काल के बारे में यदि विचार किया जाए तो निश्चित रूप से इसे सृष्टि के प्रारम्भ से मान लेना तक्रसंगत होगा। मानवाधिकारों का सीधा सम्बन्ध मानवीय सुखों से है और सुख की अवधारणा को तभी से मानना श्रेयस्कर होगा जब से मानव जाति, समाज एवं राज्य का उदय हुआ। कालक्रमानुसार मानव सुख का रायरा विस्तृत हुआ और यह समाज, राष्ट्र और अन्तर्राष्ट्रीय स्वर पर पल्लवित हुआ। मानवाधिकार को प्रारम्भिक काल में भी बेबीलोनियन नियमों (Babylonian Laws), बेबीलोन के हम्मूराबी (1792–1750 ई.पू.) के दौरान, लैगास के यूरूकागीना (3260 ई.पू.), अक्कड़ के सारगोन (2300 ई.पू.) के दौरान भी संरक्षण प्रदान करने का उल्लेख मिलता है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में वैदिक साहित्य में ''सर्वे भवन्तु सुखिनः'' जैसी कई ऋचाओं का उल्लेख मानवाधिकारों की पुष्टि करते हैं।

26-2- ekuokf/kdkj % vFk] lidYiuk ,o idfr

मानवाधिकार शब्द को पूर्णतः समझने की दृष्टि से पहले हमें 'अधिकार' शब्द को बेहतर तरीके से समझना होगा। 'अधिकार' शब्द को परिभाषित करते हुए हैरोल्ड लास्की ने कहा है :

''अधिकार मानव जीवन की ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिनके बिना सामान्यतया कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं कर सकता।'' अब ऐसी स्थिति में मानवाधिकारों को यह कहना तक्रसंगत होगा– ऐसे अधिकार जिनके बिना एक मानव अपने व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के बारे में सोच भी नहीं सकता जो कि मानव में मानव होने के फलस्वरूप अन्तर्निहित हैं। मानवाधिकार वे अधिकार हैं जो एक मानव को मानव होने के नाते आवश्यक रूप से मिलने चाहिए।

'मानवाधिकार' शब्द का प्रयोग इसकी सार्वभौम घोषणा होने के साथ ही 1948 में किया गया जो मूलतः अठारहवीं शताब्दी के 'मानव का अधिकार' (Rights of Man) का पुनः प्रवर्तन (Revival) कर ऐसा बनाया गया। इससे पूर्व परम्परागत रूप से 'मानवाधिकार' को अहस्तान्तरणीय अधिकार, अन्य संक्राम्य अधिकार, प्राकृतिक अधिकार या मानव का अधिकार (Rights of Man) कहा जाता था।

मानवाधिकार के अर्थ और व्याख्या को ध्यान में रखते हुए इसके दो दृष्टिकोण प्रचलन में हैं :

1- सैद्धान्तिक या दार्शनिक सिद्धान्त से सम्बन्धित दृष्टिकोण।

2- उपयोगितावादी या व्यवहारवादी सैद्धान्तिक दृष्टिकोण।

26-3- l)kfUrd ;k nk'kfud fl)kUr ls lEcfU/kr nf'Vdk.k

इस दृष्टिकोण के अन्तर्गत विभिन्न दर्शनवेत्ताओं, विद्वानों के द्वारा सिद्धान्त रूप में मानवाधिकारों की व्याख्या की जाती है। इसमें व्यावहारिक पहलू पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता। मानवाधिकारों के अर्थ एवं व्याख्या की दृष्टि से सैद्धान्तिक दृष्टिकोण को निम्न पाँच सिद्धान्तों में वर्गीकृत किया जा सकता हैं :

(i) प्राकृतिक अधिकार सिद्धान्त

(ii) विधिजन्य अधिकार सिद्धान्त

(iii) अधिकार का सामाजिक कल्याण सिद्धानत

(iv) अधिकार का आदर्शवादी सिद्धान्त

(v) अधिकार का ऐतिहासिक सिद्धान्त

उक्त सभी दृष्टिकोण मूलतः सिद्धानत रूप में मानवाधिकार के अर्थ और व्याख्या को स्पष्ट करते हैं, भले ही इस दृष्टिकोण में सिद्धान्तों का पहलू प्रकृति द्वारा प्रदत्त अधिकार हो या कानूनजन्य। यहाँ तक कि व्यावहारिकता से सम्बन्धित होने पर भी सिर्फ सिद्धानत रूप को ही ग्राह्य किया जाता हैं

26-3-1- ikd`frd vf/kdkj fl)kUr

प्राकृतिक विधि के सिद्धान्तों से 'मानवाधिकार' की संकल्पना व्यापक एवं अन्तर्निष्ठात्मक स्थिति में जुड़ी हुई है। इसके अतिरिक्त सर्वाधिक प्रोत्साहन प्राकृतिक विधि के सिद्धान्तों को 17वीं सदी में गहन रूप से प्राप्त हुआ। जॉन लॉक के अनुभववाद, थामस हॉब्स के भौतिकवाद, स्पिनोजा के विचारों और रेने डिस्कार्ट्स के बुद्धिवाद ने व्यापक रूप से इस सिद्धान्त में आस्था जाग्रत की। अंग्रेजी दार्शनिक जॉन लॉक जिसे आधुनिक काल का महत्वपूर्ण 'प्राकृतिक विधि विचारक' कहना ही बेहतर होगा, की भूमिका को इस सिद्धान्त के मूल में उल्लेखनीय कहा जा सकता हैं। अन्य दार्शनिकों में वाल्टेयर, जीन जैम्स, रूसो एवं माण्टेस्क्यू का योगदान भी सर्वथा सराहनीय कहा जा सकजा है (जॉन लॉक ने अपने विचारों जो कि 1688 की क्रान्ति से सम्बद्ध थे) के आधार पर यह सिद्ध कर दिया कि कुछ ऐसे अधिकार हैं जो मानव को मानव होने के नाते ही उपलब्ध होते हैं। जीवन जीने का अधिकार, सम्पत्ति का अधिकार और स्वतन्त्रता का अधिकार कुछ ऐसे अधिकार हैं जो स्वतः प्राप्त होते हैं। जैसे ही सामाजिक समझौते के तहत मानव ने सिविल समाज में प्रवेश किया तो उस दौरान राज्य के पक्ष में मानव ने उन अधिकारों के 'पुनः प्रवर्तन' (Revival) को स्वीकार किया। प्राकृतिक अधिकार सिद्धानत के सन्दर्भ में एलेन पैजेल्स के विचारों को उद्धत करना बेहतर होगा ''व्यक्ति के पास अधिकार हैं, समाज पर या समाज के विरूद्ध दावे हैं, यह कि समाज इन अधिकारों को अवश्य मान्यता प्रदान करे, जिस पर वह कार्य के लिए बाध्य है, मानव के अन्तरस्थ हैं।'' प्राकृतिक अधिकार सिद्धान्त से सम्बन्धित इस

परिभाषा एवं विवेचनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि मानव के मानव होने के नाते ही कतिपय मानव अधिकार मानव को प्राप्त होते हैं और इस स्थिति में राज्य के लिए इन्हें लागू करना अपरिहार्य हो जाता है। अब यदि राज्य इन अधिकारों को सुनिश्चित नहीं कर पाता है तो भी इस समझौते के तहत कि उसे अपने सदस्यों, नागरिकों के हितों की रक्षा करनी चाहिए तो इस आशाय से भी एक जिम्मेदार और लोकप्रिय क्रान्ति का उदय होता है। इसी तरह प्राकृतिक आधार पर मानवाधिकारों का प्राकट्य हो जाता है।

26-3-2- fof/kt U; vf/kdkj fl)kUr

इस सिद्धान्त के तहत मानवाधिकारों को विधिजन्य और कानून के दायरे में माना जाता है। कानून द्वारा प्रदत्त अधिकार राज्य की संरचना माना जाता है। विधिजन्य अधिकार सिद्धान्त को मानने वाले विचारक प्राकृतिक सिद्धान्तों की अस्वीकार करते हैं। उनके अनुसार कोई भी अधिकार प्रकृति में अन्तर्निहित नहीं होते हैं और न ही पूर्ण होते हैं। इसी विचारधारा के प्रखर प्रवर्तक जेर्मी बेन्थम प्राकृतिक सिद्धान्तों को विवेकहीनता मानते हैं। जेर्मी बेन्थम के अनुसार प्राकृतिक सिद्धान्त पूर्णतः निराधार सिद्धान्त हैं।

26-3-3 vf/kdkj dk lkekftd dY;k.k fl)kUr

सामाजिक कल्याण का सिद्धानत मानव समाज के कल्याण पर आधारित सिद्धानत होता है, इसीएि इसे सामाजिक समीचीनता का सिद्धान्त भी कहा जाता है। इस सिद्धानत में आस्था रखने वाले एवं प्रणेता विचारकों के अनुसार पारम्परिक विधिजन्य एवं प्राकृतिक सभी सिद्धानत मूलतः समाजिक कल्याण की अवधारणा पर आधारित होते हैं। उदाहरण के तौर पर 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' आत्यन्तिक सिद्धान्त (Absolute principle) नहीं है अपितु समाजिक कल्याण के आधार पर विनियमित (Regulated) है। इसी तरह अन्य अधिकार भी सामाजिक कल्याण की अपेक्षाओं के आधार पर विनियमित होते हैं।

मानवाधिकारों के विकास में सामाजिक कल्याण सिद्धान्त की महती भूमिका रही है। इसी सिद्धान्त के फलस्वरूप मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा में आर्थिक एवं सामाजिक अधिकारों एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा में सांस्कृतिक, आर्थिक एवं सामाजिक अधिकारों को समाहित किया गया है। सामाजिक कल्याण सिद्धान्त के प्रणेता के रूप में सामाजिक विधिशास्त्री 'रस्को पाउण्ड' का नाम उल्लेखनीय है।

26-3-4- vf/kdkj dk vkn'koknh fl)kUr

मानवाधिकार के इस सिद्धान्त में आदर्शवादी तत्त्वों की प्रमुखता होती है जो मानव के आन्तरिक विकास और पूर्णतात्मक अन्तःशक्ति पर बल देते हैं। आदर्शवादी सिद्धानत को इसी के परिणामस्वरूप व्यक्तित्व सिद्धान्त भी कहा जाता है। स्वतन्त्रता, प्राण एवं सम्पत्ति का अधिकार आदर्शवादी या व्यतिव सिद्धान्त की श्रेणी में गिने जाते हैं। आदर्शवादी सिद्धान्त के विचारक इस सिद्धान्त को सर्वोच्च

एवं आत्यन्तिक (Absolute) मानते हैं। आदर्शवादी सिद्धान्त मूल अधिकार से व्युत्पन्न (Derived) होता है।

26-3-5- vf/kdkj dk ,frgkfld fl)kUr

मानवाधिकार के ऐतिहासिक सिद्धान्त को ऐतिहासिक प्रक्रिया की रचना माना जाता है। इस सिद्धान्त के तहत यह माना जाता है कि लम्बे समय से चली आ रही परम्परा कालक्रम के आधार पर अधिकार का रूप धारण कर लेती है। प्रकाश, वायु, मार्ग आदि को ऐतिहासिक सिद्धान्त के रूप में लिया जाता है। जैसे– चिरकाल से जिस मार्ग पर लोग गमन करते हैं, उसे हर व्यक्ति अपने चलने का मार्ग मान लेता है और यह एक अधिकार हो जाता है जिस पर चलने से उसे रोका नहीं जा सकता।

ck/k iz'u&1

fVIi.kh %&

¼d½ नीचे दिये गये स्थान में अपने उत्तर को लिखियें।

¼[k½ अध्याय के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजियें।

1- मानवधिकार का क्या अर्थ है ?

....

....

....

....

2- मानवधिकारों के वर्गीकरण को स्पष्ट कीजिए ?

....

....

....

....

26-4 mi;ksfxrkoknh ;k 0;kogkjoknh l)kfUrd nf'Vdks.k

उपयोगितावादी दृष्टिकोण मानवाधिकारों का व्यावहारिक दृष्टिकोण वाला सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार मानवाधिकार की परिभाषा जानने के लिए अधिक प्रयास नहीं करना चाहिए अपितु मानवाधिकारों की सम्मत सूची में से 'मानव–अधिकार' को जानने का प्रयास करना चाहिए। उदाहरण के लिए हम देखते हैं कि भारतीय संविधान के भाग–3 में मूल अधिकारों के लिए किसी भी प्रकार की परिभाषा नहीं दी गई है अपितु मूल अधिकरों की एक सूची दी गई है। उस सम्मत सूची से ही मूल–अधिकार का आशय निकाल लिया जाता है। इसी संदर्भ में थामस बर्जेन्थाल का मानना है कि मानव–अधिकारों की सम्मत सूची में मानवाधिकार का आशय अनतर्विष्ट है, इसी के चलते सम्मत सूची को हमारा परिभाषात्मक मार्गदर्शन तो अवश्य होना चाहिए ताकि अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय 'मानव अधिकारों' और मूल स्वतन्त्रताओं के सन्दर्भ में जानकारी प्राप्त कर सके। इस विचारधारा से प्रभावित विचारकों का मानना है कि मानव अधिकार के अर्थ को बेहतर ढंग से समझने के

लिए सम्मत सूची से अर्थ निकालना एक उत्कृष्टतम तरीका हो सकता है। जैसे– यदि हमें संयुक्त राष्ट्र चार्टर में वर्णित 'मानव अधिकार और मूल स्वतंत्रता' का अर्थ जानना है तो मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा, सिविल और राजनैतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा एवं आर्थिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक अधिकारों की अन्तराष्ट्रीय प्रसंविदा में दी गई मानव अधिकारों की सम्मत सूची से समझना चाहिए।

इस तरह मानवाधिकार के अर्थ को समझने के लिए व्याख्या करने के लिए विभिन्न दृष्टिकोण एवं सिद्धान्त अपनी परिसीमाओं के साथ प्रचलित हैं। सभी सिद्धान्त अपने–अपने दृष्टिकोण से अर्थ स्पष्ट करते हैं, किसी भी दृष्टिकोण को आत्यन्तिक (Absolute) नहीं कहा जा सकता।

26-5 ekuokf/kdkjksa dk oxhdj.k
(Classification of Human Rights)

मानवाधिकारों के अर्थ, प्रकृति एवं संकल्पना को पूर्णतः स्पष्ट रूप से समझने के लिए मानवाधिकारों का वर्गीकरण कर अध्ययन करना बेहतर माध्यम होगा। मानवाधिकार को लुइस बी.सोहन ने अपनी पुस्तक 'द न्यू इन्टरनेशनल लॉ : प्रोटेक्शन ऑफ द राइट्स ऑफ इण्डिविजुअल्स रैदर दैन ऑफ स्टेट्स (The New International Law : protections of the rights of individuals rather than of states) के पुष्ठ संख्या 32 पर निम्नलिखित तीन भागों में वर्गीकृत किया है–

- प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकार (Human Rights of First Generation)
- द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकार (Human Rights of Second Generation)
- तृतीय पीढ़ी के मानवाधिकार (Human Rights of Third Generation)

26-5-1 izFke ih<h ds ekuokf/kdkj (Human Rights of First Generation)

प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकारों में वे मानवाधिकार हैं जो चिरकाल से परम्परागत रूप में विद्यमान रहे हैं। सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों की अन्तराष्ट्रीय प्रसंविदा में जिन मानव अधिकारों को सम्मिलित किया गया है, उनका स्वरूप नया नहीं है। ग्रीक के नगर राज्य के दौरान भी इनका अस्तित्व था। मानव तथा नागरिक के अधिकार की फ्रांसीसी घोषणा, मेग्नाकार्टा, स्वतंत्रता की अमेरिकी घोषणा में भी इन अधिकारों का अस्तित्व दृष्टिगोचर होता है। ये अधिकार प्राचीन काल में स्थापित मूल्यों का ही प्रतिबिम्ब हैं जिसे भारत से लेकर विश्व के सभी देशों के संविधान, दस्तावेजों एवं समझौतों में सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों के रूप में समाहित किया गया है। सिविल एंव राजनैतिक प्रसंविदा पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा, अमेरिकी एवं अफ्रीकी दस्तावेजों, यूरोपियन अभिसमयों में भी इन अधिकारों की झलक देखी जा सकती है। चिरकालिक होने की स्थिति में ही इन अधिकारों को 'प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकार' (Human Rights of First Generation) की श्रेणी में लिया गया है।

26-5-2 f}rh; ih<h dk ekuokf/kdkj **(Human Rights of Second Generation)**

द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकारों के अन्तर्गत आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रंसविदा में जो अधिकार सम्मिलित हैं, उन्हें द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकार (Human Rights of Second Generation) कहा जाता है। द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकारों की उत्पत्ति सिविल और राजनैतिक अधिकारों के पश्चात् हुई है। इसके अतिरिक्त सिविल एवं राजनैतिक अधिकार भारतीय संविधान के भाग–3 में समाहित हैं जबकि सामाजिक एवं आर्थिक अधिकार भारतीय संविधान के भाग–4 में वर्णित हैं। ऐसा माना जाता है कि आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों का विकास सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों को प्रभावशाली एवं सार्थक बनाने के लिए हुआ है, क्योंकि निश्चित रूप से इन अधिकारों के बिना सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों का कोई महत्व नहीं है।

26-5-3 r`rh; ih<h dk ekuo vf/kdkj **(Human Rights of Third Generation)**

तृतीय पीढ़ी के अन्तर्गत सामूहिक अधिकार आते हैं। इन अधिकारों को अभी पूर्णतः विकसित नहीं कहा जा सकता। व्यक्तियों के संयुक्त रूप से भी कुछ अधिकार होते हैं जो जनता और राष्ट्र के रूप में बड़े समुदाय रूप में समूह का निर्माण करते हैं। ये अधिकार सामूहिक अधिकार हैं जिन्हें तृतीय पीढ़ी के अधिकार कहा जाता है। लुईस बी.सोहन के अनुसार व्यक्ति इकाइयों, समूह या समुदाय जैसे कि परिवार, धार्मिक समुदाय, सामाजिक क्लब, जातीय समूह, व्यापार संघ, वृत्तिक संगम (Association), जनता, राष्ट्र और राज्य का सदस्य होता है। अतएव यह आश्चय्र की बात नहीं है कि अन्तराष्ट्रीय विधि केवल व्यक्तियों के अन्य संक्राम्य अधिकारों को ही मान्यता नहीं प्रदान करता है, बल्कि व्यक्तियों द्वारा संयुक्त रूप से प्रयुक्त कतिपय सामूहिक अधिकारों की भी मान्यता प्रदान करता है जो बड़े समुदाय के रूप में समूह बनाते हैं जिनमें जनता और राष्ट्र समाहित हैं।'' विकास का अधिकार, शान्ति का अधिकार एवं आत्मनिर्णय का अधिकार मूल रूप से तृतीय पीढ़ी के अधिकारों की श्रृंखला में आते हैं।

26-6- ekuokf/kdkj dh ldYiuk **(Concepts of Human Rights)**

समय के चलते हुए प्रक्रम में मानवाधिकार की संकल्पना मात्र राजनैतिक और नैतिक संकल्पना ही नहीं अपितु विधिक संकल्पना बन गई है और वर्तमान दौर में मानवाधिकार विकसित विधिशास्त्रीय विषय–वस्तु बनने की ओर प्रवृत्त हो रहे हैं। मानव अधिकारों की संकल्पना की धारणा के अनुसार मानवाधिकार अन्तराष्ट्रीय समुदाय है जो मानवाधिकारों को मान्यता प्रदान करता है और उसे राज्य के विरूद्ध क्रियान्विति की शक्ति प्रदान करता है। संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के बाद से विद्वानों की यह धारणा बन पड़ी है कि एक व्यक्ति मो मानवाधिकार राज्य के विरूद्ध अधिकार प्रदान करते हैं। मानव अधिकारों की न्यायोचितता और अन्तिम उत्पत्ति पर ध्यानाकर्षित न किया जाकर यह माना जाता है कि मानवाधिकार वैयक्तिक और सामूहिक माँगों का प्रतिनिधित्व करते हैं। निष्कर्षतः यह कहना ठीक ही होगा कि मानवाधिकार राज्य की शक्ति को सीमित करते हैं। मानवाधिकारों को सार्वभौम प्रकृति के अधिकार कहे जा सकते हैं लेकिन निरपेक्ष प्रकृति के अधिकार नहीं। निर्विवाद यह सत्य है कि कोई भी व्यक्ति भले ही

वह उस क्षेत्र का निवासी हो या नहीं, किसी भी देश में उसे वे सभी अधिकार प्रापत होंगे जो उस क्षेत्र के निवासी को प्रापत हैं अतः मानवाधिकार सार्वभौमिक अधिकार हैं। समूह या व्यक्ति के कुछ ऐसे अधिकार होते हैं जो विशेष परिस्थिति में प्रतिबंधित होते हैं। अतः इन्हें निरपेक्ष नहीं कहा जा सकता।

26-7 lkekftd U;k;

सामाजिक न्याय कल्याणकारी राज्य की संस्वीकृति है। यह समाज को निष्पक्ष रूप से व्यवस्थित करता है। कल्याणकारी राज्य का आदर्श है कि जन कल्याण के कार्यो को सुरक्षा एवं संरक्षण द्वारा प्रभावी ढंग से निरन्तर बढ़ाया जाय। उत्तम सामाजिक व्यवस्था वही होती है जिसमें सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की समस्त संस्थाओं से प्रकट हो। राज्य अपने नागरिकों को सामाजिक न्याय प्रदत्त कराने एवं मानवाधिकारों की सुरक्षा में समर्थ हो। राज्य की यह समर्थता व्यवस्थापिका या अन्य किसी संस्था द्वारा अपने नागरिकों के जीवन–यापन के उचित साधनों की रक्षा करने के सम्बन्ध में समुदाय की सामग्री स्रोतों का निष्ठापूर्वक एवं उचित वितरण करने से सम्बद्ध है। इसके लिए राज्य द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को वैधानिक एवं सार्वजनिक अवसरों की समानता, स्वास्थ्य और श्रम शक्ति का दुरूपयोग न होने देना, बालकों, महिलाओं और युवाओं के उत्पीड़न को रोकना और सबसे अधिक शक्ति की गरिमा सुनिश्चित करना वांछित है।

भारतीय संविधान में प्रत्येक नागरिकों को सामाजिक, आर्थक एवं राजनीतिक न्याय प्रदान कराने हेतु आवश्यक मूल अधिकारों का निश्चयन किया गया है जो दूसरे अर्थो में मानवीय अधिकारों के अनुरूप ही कहे जा सकते हैं। वर्तमान समय में भारत में सामाजिक न्याय की प्राप्ति और व्यक्ति के मानवीय अधिकारों की रक्षा की स्थिति क्या है ध यह एक विचारणीय प्रश्न है।

26-8 lkekftd U;k; dk vFk

''समाज के प्रत्येक व्यक्ति जो जीवन की मूलभूत अनिवार्य आवश्यकताओं तथा भोजन, वस्त्र एवं मकान की पूर्ति हो, प्रत्येक व्यक्ति को विकास का उचित अवसर मिले। व्यक्ति द्वारा व्यक्ति के शोषण को रोका जाए तथा आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो।''

देश की पहली पंचवर्षीय योजना एक प्रारम्भिक एवं अन्तःवर्ती योजना थी, जिसमें सामाजिक न्याय उपलब्ध कराने का कोई लक्ष्य नहीं रखा गया था। दूसरी योजना में सामाजिक न्याय को समावेशित करते हुए समाज के कमजोर एवं सुविधारहित वर्गो को सम्भावित अवसरों को अधिकतम मात्रा में उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गयी। साथ ही समाजवादी अवसरों को अधिकतम मात्रा में उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गयी। तृतीय पंचवर्षीय योजना में भी अधिकतम लोगों को सामाजिक न्याय की व्यवस्था की गयी। चौथी योजना में समाज के द्रूत विकास और उसके साथ–साथ समानता एवं सामाजिक न्याय की दिशा में निरन्तर प्रगति का उद्देश्य निर्धारित किया गया है। पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में 'गरीबी हटाओ' का नारा दिया गया। छठी पंचवर्षीय योजना में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के माध्यम से आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़ी जनसंख्या के जीवन स्तर को सुधारना था। सातवीं योजना में गरीबी की समस्या पर सीधा प्रहार करके बेरोगारी एवं क्षेत्रीय असमानताओं को दूर करना था। आठवीं व नवीं योजना में भी इसी क्रम में

कार्य चलता रहा। दसवीं पंचवर्षीय योजना में इस दिशा में विशेष बल दिया गया है।

राष्ट्र में स्वाधीनता के बाद निस्सन्देह चहुँ ओर प्रगति हुई है लेकिन क्या इस प्रगति का लाभ समाज के विभिन्न वर्गो को समान रूप से मिला है क्या हमारी पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से देश में बेरोजगारी, गरीबी और असमानता घटी है। अनुसूचित जाति व जनजाति एवं समाज के पिछड़े वर्ग को इन सबका कितना लाभ मिला है? क्या महिलाओं की दशा में समुचित सुधार हुआ है? ऐसे अनेक प्रश्न आज भी अनुत्तरित हैं। वर्तमान में एक और जोरदार बहस यह भी छिड़ी हुई है कि वास्तव में समाज में कमजोर वर्ग किसे माना जाए। इस सम्बन्ध में सरकार की भी कोई स्पष्ट नीति नहीं है। हमारे देश में ऐसे करोड़ों लोग हैं जिनको दो वक्त की रोटी भी नहीं मिल पाती, तन पर कपड़ा और छत तो बहुत दूर की बात है। अनेक लोग अत्यधिक गरीबी की हालात में अपना जीवन–यापन कर रहे हैं। भूमिहीन मजदूरों, सीमान्त कृषकों तथा बंधुआ मजदूरों की तरह ही ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों के लोग भी इस वर्ग के अन्तर्गत आते है, जिन्हें आज तक सरकार के अथक् प्रयासों के उपरान्त भी न्याय नहीं मिल रहा है।

वहीं दूसरी तरफ मानव अधिकारों का प्रश्न अत्यधिक जटिल होता जा रहा है। मानव अधिकारों के हनन या उनकी क्रमिक क्षति के सम्बन्ध में यह दृष्टिकोण नहीं अपनाया जा सकता कि यह एक तरफा मामला है और कुछ सिरफिरे आतंकवादियों और शरारती समाज विरोधी तत्वों या विदेशों से प्रेरणा प्राप्त करने वाले विध्वंसकों को पूरी शक्ति से दबाकर शान्ति स्थापित करना ही काफी है। जिस देश में गरीबों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही हो, सामान्य मेहनतकश छँटनी और बेरोजगारी के शिकार बनते हों या खेत मजदूर ओर निर्माण कार्यों में लगे मजदूर भूमिपतियों और ठेकेदारों के अत्याचारों के शिकार हों, वहाँ मानव अधिकारों के इन आयामों पर गम्भीर विचार करना आवश्यक हो जाता है।

इसी तरह नारी उत्पीड़न के सम्बनध में भी यही स्थिति बरकरार है। दहेज प्रथा तथा दुल्हन को जलाना तो मध्य वर्ग की व्याधियाँ हैं इनको रोकने के लिए बनासे गये कानून भी कारगर सिद्ध नहीं हो पाये हैं। क्या इसका कारण सामाजिक चेतना का अभाव, अत्यधि कमंद विकास तथा कानून को लागू करने वालों को दोषपूर्ण कार्यवाही कहा जा सकता है? ये प्रश्न भी आज तक अनुत्तरित हैं।

शोषण, अत्याचार और बेरोजगारी सम्बन्धी सभी समस्याएं एक भौगोलिक सामुदायिक आयाम भी प्रस्तुत करती हैं। नगरों की तुलना में गाँवों, आदिवासी क्षेत्रों और अविकसित राज्यों के दूर–दराज के क्षेत्रों में इन सभी प्रक्रियाओं के चलते मानवाधिकार का हनन अल्प क्षेत्रों की अपेक्षा ज्यादा होता है। अल्पसंख्यकों के अनुभव तो और भी पीड़ादायक हैं। औद्योगिक क्षेत्रों में श्रमिकों की छँटनी के लिए हड़तालों की तुलना में तालेबन्दियाँ अधिक जिम्मेदार हैं। अनुसूचित जातियों, जनजातियों के आयोग द्वारा संसद एवं विधान मण्डलों के समक्ष प्रस्तुत की गई रिपोर्ट, अल्पसंख्यकों और महिलाओं सम्बन्धी अपराधों की प्रशासकीय सूचनाएं भी स्वयं अपनी कहानी कहती है।

समस्या यह है कि अन्याय और अत्याचार करने वाला वर्ग समाज का प्रतिष्ठित वर्ग है, और सत्ता पर हावी है। अत्याचारों में वृद्धि उनके प्रतिरोध स्वरूप तरह–तरह के आन्दोलन और सरकार द्वारा आतंकवादी कार्यवाहियों के दमन की घटनाओं में वृद्धि यह सिद्ध करती है कि आधुनिक लोकतांत्रिक प्रणाली भी जनता के अधिकारों की सुरक्षा नहीं कर पा रही है। इस दिशा में न्यायपालिका की भूमिका

भी नगण्य ही रही है। भारतीय न्यायपालिका और पुलिस, जिसपर देश की जनता को सामाजिक न्याय दिलाने एवं उसके मानवाधिकारों की रक्षा का गंभीर दायित्व सौंपा गया है, उसकी वर्तमान तस्वीर तो बिल्कुल ही विकृत एवं भ्रष्ट है। पुलिस निरंकुश व बर्बर है तथा उसका मानव अधिकारों से कुछ भी लेना–देना नहीं है तथा आज भी भारतीय पुलिस सामन्तवादी मानसिकता से ग्रस्त नजर आती है।

26-9 lkekftd U;k; dh vo/kkj.kk

सामाजिक न्याय का विचार प्रथमतः इस आदर्श पर आधारित है कि समाज में सभी मनुष्य बिना किसी धर्म, सम्प्रदाय, कुल या रंग के भेदभाव से समान हैं। सामाजिक न्याय को अवधारणा मौलिक है फिर भी इसमें राजनीतिक असन्तोष समाज के लिए आदर्श राज्य की अवधारणा को प्रस्तुत करता है, जिसमें वर्तमान राज्य से बेहतर अर्थपूर्ण विस्तार परिलक्षित होता है।

सामाजिक न्याय की अवधारणा मुख्यतः स्वतन्त्रता, समानता और सुरक्षा, इन तीनों आधारों पर ही टिकी है। अतः एक राज्य के लिए यह प्राथमिक और सर्वोच्च लक्ष्य होना चाहिए कि उसके राज्य में कमजोर और सुविधाविहीन वर्ग को पूर्ण सुरक्षा प्राप्त हो, उसकी स्वतन्त्रता में कोई दखलन्दाजी न हो और उसके साथ समानता का व्यवहार हो।

सामाजिक न्याय आज सर्वाधिक बहस का विषय बना हुआ है परन्तु सामाजिक न्याय की सर्वमान्य परिभाषा का उल्लेख कहीं नहीं है। अतः सामाजिक न्याय से तात्पर्य यह माना गया है कि ''सामाजिक न्याय एक युग्म शब्द है, जिसे सामाजिक और न्याय इन दो शब्दों से बनाया गया है।''

'सामाजिक' का अर्थ समाज की विभिन्न स्थितियों से है तथा समाज का अर्थ मनुष्यों के विभिन्न पारस्परिक सम्बन्धों की व्यवस्था के रूप में लिया जाता है। समाज की इन व्यवस्था के अन्तर्गत समाविष्ट पारस्परिक सम्बन्ध अनेक प्रकार के होते हैं, जैसे– पारिवारिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक। इस तरह से समाज एक ऐसी व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत विभिन्न कोटि के सामाजिक सम्बन्धों द्वारा निर्मित अन्तःसम्बन्धित उपव्यवस्थायें संघटित हैं। इस दृष्टि से 'सामाजिक' शब्द का सामान्य प्रयोग सामाजिक विद्वानों में समाज व्यवस्था से सम्बन्ध रखने वाली स्थितियों के अर्थ में किया जाता है। राजनीतिक, आर्थिक या किसी अन्य प्रकार के मानवीय सम्बन्ध को सामाजिक की परिधि के बाहर रखना अतक्रसंगत है। अतः समाज व्यवस्था अथवा उसकी विविध उपव्यवस्थाओं सम्बन्धी सभी स्थितियाँ सामान्यतया 'सामाजिक' हैं।

प्रसिद्ध व्याकरण ज्ञाता पाणिनी ने 'न्याय' शब्द को दो रूपों में विभाजित किया था– सांसारिक और सामाजिक जिन्हें क्रमशः प्राकृतिक और यथार्थवादी कहा जाता है। सांसारिक अथवा प्राकृतिक स्तर को परिभाषित करते हुए वे कहते हैं ''न्याय नियन्ति संहरं यस्मिनिन्नति''। अर्थात जो प्रारब्ध द्वारा नियन्त्रित हो जिसे 'नियति' भी कहते हैं– सांसारिक न्याय के अन्तर्गत आता है और जो जीवित प्राणी के ऊपर लागू होती है। यह परिभाषा सांसारिकता और दैवीय न्याय का द्योतक है। सामाजिक अथवा यर्थार्थवादी संदर्भ में– ''नियमेन ईयते इति' अर्थात् जो कानून द्वारा नियन्त्रित होता है, उसे न्याय कहते हैं।

न्याय शब्द का प्रयोग एक से अधिक अर्थों में किया जाता है, परन्तु इसका जो विशेष अर्थ यहाँ अभीष्ट है, उसका सम्बन्ध राज्य द्वारा स्थापित न्यायालयों और उन माध्यमों से है जिनके निर्णय राज्य की शक्ति से कार्यान्ति और वाद के पक्षों पर लागू किये जा सकें।

'सामाजिक' और 'न्याय' इन दो शब्दों की सामान्य विवेचना के आधार पर 'सामाजिक न्याय' के प्रत्यय का अर्थ समझने में सुविधा हो जाती है, क्योंकि 'न्याय' जो पूर्ण या आंशिक रूप से समाज व्यवस्था या उपव्यवस्थाओं को व्यवस्थित रखने के लिए किया जाता है, सामाजिक न्याय है और अधिक स्पष्ट शब्दों में सामाजिक नयाय से तात्पर्य यह है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को जीवन की मूलभूत अनिवार्य आवश्यकताओं, यथा– भोजन, वस्त्र एवं मकान की पूर्ति हो, प्रत्येक व्यक्ति को विकास का समूचित अवसर मिले, व्यक्ति का व्यक्ति के द्वारा शोषण न हो एवं आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो।

इस तरह से सामाजिक न्याय शब्द जरूर छोटो है परन्तु अपने अन्दर महान अर्थों को समेटे हुए है। इसका मुख्य कारण है सामाजिक न्याय न केवल समाज में न्याय को स्थापित करने में मदद पहुँचाता है बल्कि वृद्ध, गरीब बालकों तथा महिलाओं और अन्य असहाय व्यक्तियों को अनेक प्रकार के शोषणों, उत्पीड़नों और अत्याचारों से उनकी रक्षा करता है।

ck/k i'u&2

fVIi.kh %&

¼d½ नीचे दिये गये स्थान में अपने उत्तर को लिखियें।

¼[k½ अध्याय के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजियें।

3- सामाजिक न्याय का क्या अर्थ है ?

.....
.....
.....
.....

4- सामाजिक न्याय की अवधारणा बताइये ?

.....
.....
.....
.....

26-10 lkjk'k

1948 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा की गयी सार्वभौतिक अधिकारों की घोषणा में मानव अधिकारों का विस्तृत उल्लेख किया गया है। इस घोषणा में 30 अनुच्छेद पाये जाते हैं जिनमें सभी वांछनीय मानव अधिकारों का उल्लेख है। इनमें जीवन, स्वाधीनता और वैयक्तिक सुरक्षा, गुलामी या दासता के निषेध, शारीरिक यातना पर रोक, कानूनी सहायता एवं सुरक्षा, अधिकारों का अतिक्रमण करने वाले कार्यो के

विरूद्ध विधिक सहायता, मनमाने ढंग से की गयी गिरफ्तारी, नजरबन्दी या देश निष्कासन पर रोक, अधिकारों एवं कर्तव्यों के निर्धारण एवं आरोपित दोषों के मामले में न्यायोचित सुनवाई, आरोपित अपराधियों को अपना पक्ष प्रस्तुत करने के अवसर का प्रावधान, कानून में किये गये प्रावधान के उल्लंघन को ही दण्डनीय अपराध माना जाना, व्यक्ति की एकान्तता, परिवार, घर या पत्र व्यवहार में मनमाना हस्तक्षेप न किया जाना, देश की सीमाओं के अन्तर्गत स्वतंत्रतापूर्वक आना–जाना एवं बसना, सताये जाने पर शरण लेना, किसी भी राष्ट्र विशेष की नागरिकता प्राप्त करना, जाति, राष्ट्रीयता या धर्म की रूकावटों के बिना विवाह करना तथा परिवार स्थापित करना, सम्पत्ति रखने तथा मनमाने ढंग से इससे वंचित न किया जाना विचार, अन्तरात्मा और धर्म की स्वतंत्रता, विचार और उसकी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, शान्तिपूर्ण सभा करने या समिति बनाने, शासन में भागीदारी करने, सामाजिक सुरक्षा, काम करने, इच्छानुसार रोजगार का चुनाव करने, काम के उचित और सुविधाजनक परिस्थितियों को प्राप्त करने तथा बीमारी से संरक्षण पाने, समान कार्य के लिए समान मजदूरी, उचित मजदूरी, श्रमिक संघ बनाने और भाग लेने, विश्राम एवं अवकाश प्राप्त करने, उपयुक्त जीवन स्तर प्राप्त करने, शिक्षा, सांस्कृतिक जीवन में स्वतंत्रतापूर्वक हिस्सा लेने तथा उपयुक्त सामाजिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था को प्राप्त करने के अधिकार सम्मिलित हैं।

मानव अधिकारों के संरक्षण में संरक्षण में समाज कार्य एक महत्वपूर्ण भूमिका प्रतिपादित कर सकता है क्योंकि यह न केवल प्रगतिशील सामाजिक नीतियों एवं विधानों के निर्माण के लिए आवश्यक जनमत तैयार करता है तथा अपेक्षित तथ्य उपलब्ध कराता है बल्कि उपयुक्त सेवाओं का प्रावधान सुनिश्चित कराते हुए लोगों में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता उत्पन्न करते हुए तथा लोगों को संगठित कराते हुए मानव अधिकारों के संरक्षण से संबंधित नीतियों, कानूनों, योजनाओं तथा कार्यक्रमों के प्रभावपूर्ण आयोजन को भी सुनिश्चित कराता है।

lkekftd U;k; dk ikR lkgu %

सामाजिक न्याय की अवधारणा सकारात्मक एवं नकारात्मक दो दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। नकारात्मक दृष्टिकोण के अनुसार समाज के जिन वर्गो के साथ अतीत में अन्याय हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप वे वर्तमान में पिछड़े हुए हैं और अपने इस पिछड़ेपन के कारण समाज की मुख्य धारा में जुड़ने में तथा सामाजिक क्रिया में अपेक्षित योगदान देने में अपने को असमर्थ पा रहे हैं विशिष्ट प्रकार का संरक्षण एवं संवर्द्धन प्रदान करते हुए न्याय किये जाने की आवश्यकता है। सकारात्मक दृष्टिकोण के अनुसार किसी भी समाज के मानव संसाधनों के विकास की दृष्टि से उन वर्गो के लिए विशेष उपाय किये जाने की आवश्यकता है जो विविध प्रकार के कारणों से बाधित है, समाज की मुख्य धारा में नहीं जुड़ पा रहे हैं और सामाजिक क्रिया में अपेक्षित योगदान नहीं दे पा रहे हैं।

सामाजिक न्याय की परिभाषा समाज में पायी जाने वाली ऐसी स्थिति के रूप में की जा सकती है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व का समुचित विकास करने के लिए अपेक्षित अवसर उपलब्ध हों, प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यताओं एवं क्षमताओं के अनुसार उपयुक्त कार्य की शर्तो पर स्वस्थ कार्य की परिस्थितियों में अपना कार्य सम्पादित करने के अवसर प्राप्त हों, लोगों द्वारा किये गये कार्य के परिणामस्वरूप होने वाले लाभों में उन्हें साम्यपूर्ण हिस्सा प्राप्त हो सके

तथा ऐसे व्यक्तियों को जो कार्य करने के योग्य नहीं हैं अथवा इस योग्य नहीं बनाये जा सकते, एक सम्मानजनक जीवन स्तर प्राप्त हो सके।

भारतीय संविधान के आमुख तथा भाग– III. IV एवं XVI के अन्तर्गत सामाजिक न्याय सम्बन्धी प्रावधान किये गये हैं। इस सन्दर्भ में भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16, 17, 19, 21, 23, 24, 25, 29, 38, 39, 39 (ए), 41 एवं 42 विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

समाज कार्य सामाजिक न्याय के प्रोत्साहन में विशेष योगदान दे सकता है। यह सामाजिक न्याय की आवश्यकता को उजागर करते हुए तथा इसका आश्वासन, प्रदान करते हुए विवेकपूर्ण एवं तर्कसंगत योजना एवं कार्यक्रमों का निर्माण करते हुए सामाजिक न्याय दिलाने के लिए अपेक्षित जनमत तैयार कर सकता है और इन योजनाओं एवं कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में आवश्यक सहायता प्रदान कर सकता है।

26-11 'kCnkoyh

vf/kdkj % ''अधिकार मानव जीवन की ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिनके बिना सामान्यतया कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं कर सकता।

U;k; % न्याय शब्द का प्रयोग एक से अधिक अर्थों में किया जाता है, परन्तु इसका जो विशेष अर्थ यहाँ अभीष्ट है, उसका सम्बन्ध राज्य द्वारा स्थापित न्यायालयों और उन माध्यमों से है जिनके निर्णय राज्य की शक्ति से कार्यान्ति और वाद के पक्षों पर लागू किये जा सकें।

26-12 dN mi;kxh iLrd %

- Human Rights: J.J. Ram Upadhyaya, Page 11.
- The Roots & Origins of Human Rights: Allen Pageols, Page 2, Edition, 1979.
- Human Rights: J.J. Ram Upadhyaya, Page 14.
- Human Rights: J.J. Rajm Upadhyaya, Page 14.

26-13 ck/k i'uk d mUkj

iFke mÙkj % 'मानवाधिकार' शब्द का प्रयोग इसकी सार्वभौम घोषणा होने के साथ ही 1948 में किया गया जो मूलतः अठारहवीं शताब्दी के 'मानव का अधिकार' (Rights of Man) का पुनः प्रवर्तन (Revival) कर ऐसा बनाया गया। इससे पूर्व परम्परागत रूप से 'मानवाधिकार' को अहस्तान्तरणीय अधिकार, अन्य संक्राम्य अधिकार, प्राकृतिक अधिकार या मानव का अधिकार (Rights of Man) कहा जाता था।

f}rh; mÙkj % प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकारों में वे मानवाधिकार हैं जो चिरकाल से परम्परागत रूप में विद्यमान रहे हैं। सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों की अन्तराष्ट्रीय प्रसंविदा में जिन मानव अधिकारों को सम्मिलित किया गया है, उनका स्वरूप नया नहीं है।

द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकारों के अन्तर्गत आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रंसविदा में जो अधिकार सम्मिलित हैं, उन्हें द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकार (Human Rights of Second Generation) कहा जाता है।

तृतीय पीढ़ी के अन्तर्गत सामूहिक अधिकार आते हैं। इन अधिकारों को अभी पूर्णतः विकसित नहीं कहा जा सकता। व्यक्तियों के संयुक्त रूप से भी कुछ अधिकार होते हैं जो जनता और राष्ट्र के रूप में बड़े समुदाय रूप में समूह का निर्माण करते हैं। ये अधिकार सामूहिक अधिकार हैं जिन्हें तृतीय पीढ़ी के अधिकार कहा जाता है।

r`rh; mÙkj % ''समाज के प्रत्येक व्यक्ति जो जीवन की मूलभूत अनिवार्य आवश्यकताओं तथा भोजन, वस्त्र एवं मकान की पूर्ति हो, प्रत्येक व्यक्ति को विकास का उचित अवसर मिले। व्यक्ति द्वारा व्यक्ति के शोषण को रोका जाए तथा आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो।''

prFk mÙkj % सामाजिक न्याय की अवधारणा मुख्यतः स्वतन्त्रता, समानता और सुरक्षा, इन तीनों आधारों पर ही टिकी है। अतः एक राज्य के लिए यह प्राथमिक और सर्वोच्च लक्ष्य होना चाहिए कि उसके राज्य में कमजोर और सुविधाविहीन वर्ग को पूर्ण सुरक्षा प्राप्त हो, उसकी स्वतन्त्रता में कोई दखलन्दाजी न हो और उसके साथ समानता का व्यवहार हो।

****